इग्नू
जन–जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BSOC-106

धर्म का समाजशास्त्र

इग्नू
जन–जन की
विश्वविद्यालय

BSOC-106

धर्म का सामाजशास्त्र

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रो. शरित भौमिक
टाटा इन्स्ट्यूट ऑफ सोशल साइन्सस
मुम्बई

प्रो. व. खाख
टाटा इन्स्ट्यूट ऑफ सोशल साइन्सस
मुम्बई

प्रो. डी.आर. साहू
लखनऊ विश्वविद्यालय
लखनऊ

प्रो. परवेज़ अब्बासी
साउथ गुजराती यनीवर्सिटी
सूरत

प्रो. वी. सुजाता
सेंटर फॉर दी स्टडी ऑफ सोशल सिस्टम्स
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. विभा अरोड़ा
आई. आई. टी., दिल्ली

डॉ. श्रीनिवास राव
जाकिर हुसैन सेंटर फॉर इडुकेशन स्टडीज़
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
दिल्ली

डॉ. रीमा भाटिया
मिरांडा हाउस, दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रो. देबल सिंह राय
समाजशास्त्र संकाय
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. त्रिभुवन कपूर
समाजशास्त्र संकाय
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. नीता माथुर
समाजशास्त्र संकाय
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. रबीन्द्र कुमार
समाजशास्त्र संकाय
इग्नू, नई दिल्ली

डा. अर्चना सिंह
समाजशास्त्र संकाय
इग्नू, नई दिल्ली

डा. किरणमई भूषी
समाजशास्त्र संकाय
इग्नू, नई दिल्ली

डा. आर वाशुम
समाजशास्त्र संकाय
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रो. नीता माथुर, समाजशास्त्र संकाय, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्य सामग्री संपादक : प्रो. नीता माथुर, समाजशास्त्र संकाय, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

खंड	इकाई लेखक	
खंड 1	**धर्म की सामाजिक समझ**	
इकाई 1	धार्मिक गठनः धर्म के प्राथमिक रूप	इग्नू पाठ्यसामग्री एम.केनडी द्वारा रचित इकाई 1, 3 और देबनाथ विश्वनाथ द्वारा रचित इकाई 4, *समाज और धर्म* (ESO-15) और इकाई 20, *समाज का अध्ययन* (ESO-12) से अंगीकृत, नीता माथुर द्वारा संशोधन।
इकाई 2	आत्म संयम और संचयनः धर्म, आर्थिकी और शक्ति	इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृत : इकाई 15 और 16 *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO-13) और मिचेल कैनेडी द्वारा रचित इकाई 10 *समाज और धर्म* (ESO-15) का नीता माथुर द्वारा संशोधन।
इकाई 3	तर्कसंगतिः धर्म और राजनीति/राज्य	इग्नू पाठ्यसामग्री : *समाज और धर्म* (ESO-15) की एस.एन झा द्वारा रचित इकाई 11 से अनुकूलित; खंड 3.2.1 इग्नू पाठ्यसामग्रीः *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO-13) की इकाई 17 से अंगीकृतः नीता माथुर द्वारा लघु संशोधन
इकाई 4	ईशास्त्र और परलोक सिद्धांतः जादू, विज्ञान तथा धर्म	इग्नू पाठ्यसामग्री; *समाजशास्त्रीय सिद्धांत* (ESO 13) की इकाई 23 से अंगीकृत नीता माथुर द्वारा संशोधन।
खंड 2	**धर्म के तत्व**	
इकाई 5	पवित्रता, मिथक और अनुष्ठानः धर्म का सामाजिक महत्व	इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृतः मिचेल कैनेडी द्वारा रचित इकाई 3 और 5 *समाज और धर्म* (ESO-15) शोभिता जैन द्वारा रचित इकाई 5, एड्डी रोड्रिक्स द्वारा रचित इकाई 6 और इकाई 27 *भारत में समाज* (ESO-12) का नीता माथुर द्वारा संशोधन।

इकाई 6	शरीरः जीवन चक्रीय संस्कार	इग्नू पाठ्यसामग्रीः *समाज और धर्म* (ESO-15) की त्रिभुवन कपूर द्वारा रचित, इकाई 28 और 29 और *भारत में समाज* (ESO-12) की इकाइ 16 से अंगीकृत, नीता माथुर द्वारा संशोधन
इकाई 7	प्रार्थनाः तीर्थ यात्रा और पर्व	इग्नू पाठ्यसामग्री से अनुकूलित : *समाज और धर्म* (ESO-15) की इकाई 30 प्रो. एस. के. भट्टाचार्य द्वारा रचित और इकाई 31 को जे. एस. भट्ट द्वारा रचित का नीता माथुर द्वारा संशोधन
इकाई 8	धर्म, मत और पंथ	इग्नू पाठ्यसामग्री, से अंगीकृत *समाज और धर्म* (ESO-15) की इकाई 12 जी.एस. भट्ट द्वारा रचित से नीता माथुर द्वारा संशोधन
इकाई 9	कौशलः धार्मिक विशेषज्ञ	इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृत *समाज और धर्म* (ESO-15) की इकाई 13 का नीता माथुर द्वारा लघु संशोधन।
खंड 3	**धार्मिक आंदोलन**	
इकाई 10	धर्म और एकांतः भक्ति एवं सूफीवाद	इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृत : *समाज और धर्म* (ESO15) की वंदना सिन्हा द्वारा रचित इकाई 24 का नीता माथुर द्वारा संशोधन।
इकाई 11	धार्मिक सुधार आंदोलन	इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृत : *समाज और धर्म* (ESO-15) की इकाई 26 राघवेन्द्र प्रसाद द्वारा रचित का नीता माथुर द्वारा संशोधन।
इकाई 12	नवयुग आंदोलन	इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृत : *समाज और धर्म* (ESO-15) की द्वारा रचित इकाई 27 का नीता माथुर द्वारा संशोधन।

शैक्षणिक सलाहकार : डॉ. विनोद यादव और डॉ. वन्दना शर्मा, समाजशास्त्र संकाय, इग्नू, नई दिल्ली
सचिवीय सहायक : श्रीमती सोनिया सिंह और श्री जोगिन्दर कुमार

सामग्री निर्माण

श्री तिलक राज	श्री यशपाल	श्री सुरेश कुमार
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)	अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)	सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
एम.पी.डी.डी., इग्नू, नई दिल्ली	एम.पी.डी.डी., इग्नू, नई दिल्ली	इग्नू, नई दिल्ली

जनवरी, 2021

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2021

ISBN:

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य का कोई भी अंश किसी भी रूप में पुनः प्रकाशित नहीं किया जा सकता, अनुलिपिक या किसी अन्य साधन द्वारा।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के बिना किसी लिखित आदेश व पुनः इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के कोर्स की सूचना विश्वविद्यालय के मैदान गढ़ी कार्यालय, नई दिल्ली-110068 के द्वारा प्राप्त की जा सकती है अथवा विश्वविद्यालय की वेबसाइट http://www.ignou.ac.in देखें

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय नई दिल्ली की ओर से निदेशक, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।
लेजर टाइप सेटिंग : टेसा मीडिया एण्ड कंप्यूटर्स
मुद्रित :

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

पाठ्यक्रम परिचय

आप सोचते होंगे कि धर्म में ऐसा क्या है कि वह समाजशास्त्रीय अध्ययन का विषय है। दूसरे शब्दों में मान्यताओं, अनुष्ठानों, प्रार्थना, पूजा स्थलों और धार्मिक विशेषज्ञों के बारे में समाजशास्त्रीय क्या है? इस सवाल का सरल जवाब है। प्रथम, धर्म योगदान देता है, कई लोगों के लिए जीवन के लक्ष्यों का खाका तैयार करना और द्वितीय, इन लक्ष्यों की अनुभूति के लिए व्यवहार की एक रूपरेखा प्रदान करना। व्यापक अर्थ में धर्म का समाजशास्त्र धर्म के सामाजिक संदर्भों पर ध्यान केंद्रित करता है; और सामाजिक व्यवस्था को आकार देने और पुनः आकार देने में भूमिका अदा करता है। कहीं-कहीं समकालीन समय में धर्म की उपस्थिति को सभी में देखना मुश्किल है जो लोग करते हैं और यह कि लोग कई अवसरों पर अपने धर्म की अवहेलना करते हैं। जो लोग अपने व्यवहार में धर्म के सिद्धातों को चुनौती देते हैं, वे इस तथ्य से अवगत हैं कि वे ऐसा कर रहे हैं। हालांकि, इस बात से कोई इनकार नहीं है कि अवहेलना के बावजूद कि स्पष्ट रूप से या अस्पष्ट रूप से, धर्म को जीवन के लगभग सभी पहलुओं में बुना जाता है। यह सामाजिक सामंजस्य का मार्ग प्रशस्त करता है लेकिन कई संघर्षों का स्रोत भी है।

धर्म के समाजशास्त्र पर यह पाठ्यक्रम धर्म के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करेंगा। यहाँ उद्देश्य तिगुना हैः आपको धर्म के विभिन्न रूपों से परिचित कराना; शास्त्रीय समाजशास्त्रीय विचारकों का दृष्टिकोण और सैद्धांतिक दृष्टिकोण; और चर्चा करना कि कैसे और किस तरह से धर्म समाज में बदलाव ला सकता है। पाठ्यक्रम को तीन ब्लॉकों में विभाजित किया गया है, जिनमें से प्रत्येक एक विशिष्ट विषय से संबंधित है। प्रत्येक ब्लॉक को इकाइयों में विभाजित किया गया है जो विषय के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से चर्चा करते है।

पहला खण्डः धर्म की सामाजिक समझ में चार इकाइयाँ में शामिल हैं। प्रथम इकाई धर्म के प्रारंभिक रूपों को रूपरेखा देती हैं। यह एक समूह की परिघटना के रूप में धर्म की चर्चा करता है और यह पूर्व-आधुनिक समाजों में कैसे संचालित होता है। इसके अतिरिक्त, यह एक ओर धर्म और जादू के बीच का अंतर बताता है और दूसरी ओर धर्म और विज्ञान। दूसरी इकाई विशेष रूप से मेक्सवेबर के परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में अर्थव्यवस्था और शक्ति के साथ धर्म के अंतराफलक पर चर्चा करती है। तीसरी इकाई बताती है कि धर्म राजनीति से कैसे प्रभावित होता है। हम धर्मनिरपेक्षता की प्रकृति और कार्यक्षेत्र पर चर्चा करते की जांच करते हैं कि धर्मनिरपेक्ष राज्य सत्ता के लिए संघर्ष से कैसे उभरा। चौथी इकाई जादू, विज्ञान और धर्म पर टायलर, फ्रेजर और दुर्खाइम के विचारों की व्याख्या करती है और जांच करती है कि वे एक दूसरे के साथ कैसे संबंध रखते हैं।

दूसरा खण्ड धर्म के तत्व, में पांच इकाइयाँ शामिल हैं। पांचवीं इकाई पवित्र मिथक और अनुष्ठान की समाजशास्त्रीय समझ पर आधारित है और ऐसा करने से धर्म का सामाजिक महत्व स्पष्ट होता है। छठी इकाई जीवन-चक्र अनुष्ठानों पर केंद्रित है। सातवीं इकाई तीर्थयात्रा के अवधारणा के साथ शुरू होती है और क्या है जो यात्रा को तीर्थ यात्रा बनाती है और वहाँ से तीर्थयात्रा के लिए सामाजिक महत्व की व्याख्या करती है। आठवीं इकाई संप्रदाय और पंथ की अवधारणाओं की व्याख्या करती है और उसके बाद समाज में संप्रदायों और पंथों की भमिका पर चर्चा करती है। नौवीं इकाई अनुष्ठान विशेषज्ञों पर प्रकाश डालती है। विशेष रूप से यह बताती है कि अनुष्ठान विशेषज्ञ मानव और दिव्य दुनिया के बीच मध्यस्थता करते हैं।

तीसरा खण्डः धार्मिक आंदोलन में तीन इकाइयां शामिल हैं। दसवीं इकाई भारत में दो धार्मिक आंदोलनों को प्रस्तुत करती है जो मध्ययुगीन काल में चले। इन आंदोलनों ने समाज में शांतिपूर्ण बदलाव के लिए एकांत और आत्म-प्रतिबिंब बनाने के तरीके पर ज़ोर दिया। ग्यारहवीं इकाई समाज में सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों से शुरू होती है, जो परिवर्तन का अनुबद्ध है। इसके बाद आर्यसमाज आंदोलन के उदाहरण के रूप में, सामाजिक परिवर्तन की शुरुआत में धार्मिक आंदोलनों के दायरे का एक उदाहरण है। बारहवीं इकाई रामकृष्ण मिशन के चित्रण के साथ नए युग के आंदोलनों पर आधारित है, यह बताने के लिए कि इस तरह के आंदोलनों से उन व्यक्तियों की चिंताओं का पता कैसे चलता है, जो परंपराओं में विश्वास खो चुके हैं और पहचान के मुद्दों से घिरे हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विषय सूची

		पृष्ठ संख्या
खंड 1	**धर्म की सामाजिक समझ**	**9**
इकाई 1	धार्मिक गठनः धर्म के प्राथमिक रूप	11
इकाई 2	आत्म संयम और संचयनः धर्म, आर्थिकी और शक्ति	33
इकाई 3	तर्कसंगतिः धर्म और राजनीति/राज्य	47
इकाई 4	ईशशास्त्र और परलोक सिद्धांतः जादू, विज्ञान तथा धर्म	61
खंड 2	**धर्म के तत्व**	**87**
इकाई 5	पवित्रता, मिथक और अनुष्ठानः धर्म का सामाजिक महत्व	89
इकाई 6	शरीरः जीवन चक्रीय संस्कार	105
इकाई 7	प्रार्थनाः तीर्थ यात्रा और पर्व	129
इकाई 8	धर्म, मत और पंथ	146
इकाई 9	कौशलः धार्मिक विशेषज्ञ	165
खंड 3	**धार्मिक आंदोलन**	**181**
इकाई 10	धर्म और एकांतः भक्ति एवं सूफ़ीवाद	183
इकाई 11	धार्मिक सुधार आंदोलन	201
इकाई 12	नवयुग आंदोलन	216

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खण्ड 1

धर्म की सामाजिक समझ

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 1 धार्मिक गठन : धर्म के प्राथमिक रूप*

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 धर्म की समाजशास्त्रीय समझ

1.2.1 धर्म एक सामूहिक तत्व है

1.2.2 'अलौकिक' और 'पवित्र'

1.2.3 धर्म और अनुष्ठान

1.2.4 नैतिक आचार संहिता

1.3 धर्म के प्रज्ञावादी सिद्धांत

1.3.1 प्रकृति-मिथकवाद

1.3.2 प्रेतवाद

1.3.3 जीवात्मवाद या जीववाद

1.3.4 जादू-टोने पर निर्भरता

1.4 पूर्व आधुनिक समाज में धर्म

1.4.1 एमिल दुर्खाइम का योगदान

1.5 धर्म और जादू-टोना

1.6 धर्म और विज्ञान

1.7 सारांश

1.8 संदर्भ

1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- धर्म के समाजशास्त्री अध्ययन की आवश्यकता को समझ सकेंगे;
- धर्म के प्रज्ञावादी सिद्धांतों के बारे में विचार कायम कर सकेंगे;
- धर्म, जादू-टोना और विज्ञान के बीच अंतर को समझ सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

मानव अस्तित्व के बारे में जो अनेक विश्वास तथा विचारधाराएँ हैं, धर्म उससे जुड़ा हुआ है। धर्म मानव जाति के पर्यावरण और जीवन में आसानी से समझ न आने वाले तत्वों के प्रति, मानव की प्रतिक्रिया है। अधिकांश धर्म मानव के अतीन्द्रिय और अलौकिक शक्ति को

*इग्नू पाठ्यसामग्री एम.केनडी द्वारा रचित इकाई 1, 3 और देबनाथ विश्वनाथ द्वारा रचित इकाई 4, *समाज और धर्म* (ESO-15)और इकाई 20, *समाज का अध्ययन* (ESO-11)से अंगीकृत, नीता माथुर द्वारा संशोधन।

समझने के प्रयासों से संबंधित है। धर्म मुख्यतः समाज से संबंधित है ओर लगभग सभी समाजों में पाया जाता है।

अंग्रेजी में धर्म के लिए ''रिलिजन'' शब्द का प्रयोग किया जाता है। ''रिलीजन'' शब्द की व्युत्पत्ति लेटिन शब्द (रेल, इंगियों) (rel (1) igio) से हुई जो धातु लेग (leg) से, जिसका अर्थ इकट्ठा करना, गिनना या अवलोकन करना है या धातु ''लिग'' (lig) से लिया गया है जिसका अर्थ जोड़ना है। इस प्रकार दूसरा भाव हुआ आवश्यक कार्यों का निष्पादन, जो मानव और अलौकिक शक्ति का परस्पर संबंध स्थापित करते हैं। अतः ''रिलिजन'' शब्द का अर्थ हुआ वे विश्वास और कर्मकाण्ड जो सभी धर्मों के मूल तत्व हैं। (मजुमदार, और मदन, 1956:151)

1.2 धर्म की समाजशास्त्रीय समझ

धर्म को मानव के सामाजिक तथा व्यक्तिगत जीवन के उस पक्ष के रूप में देखा जाता है जिसमें मानव की उदात्त आकांक्षाएँ होती है। यह समाज की नियामक संरचना का आधार स्तम्भ है। यह समाज की सभी नैतिक मान्यताओं, मूल्यों और आचार की मर्यादा रखता है। इस प्रकार यह समाज में सार्वजनिक व्यवस्था का आधार है और सभी नर-नारियों के लिए अंतःचेतना का उद्‌गम है। यह मानव में श्रेष्ठ गुणों का संचार कर उसे सभ्य बनाता है। लेकिन साथ ही मानव को आगे बढ़ने में यह उसके सामने बाधाएँ भी उपस्थिति करता है। मनुष्य जाति पर इसका सबसे बुरा प्रभाव यह देखने में आया है कि धर्म मनुष्य को कट्‌टरपंथी, असहिष्णु, अज्ञानी, अंधविश्वासी और रूढ़िवादी बना देता है। (ओ.डेअ.टी.एफ. 1966:2)

देश-काल के अनुसार मानव संस्कृति ने अनेक धार्मिक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। इस प्रकार धर्म के विभिन्न रूप हैं। व्यापक रूप से हम उन्हें तीन वर्गों में बाँट सकते हैंः (1) ध र्म का सामान्य रूप, (2) धर्म का जटिल रूप, (3) धर्म का मिश्रित रूप। सामाजिक दृष्टि से विचार करने पर वर्ग (2) का उद्‌भव वर्ग (1) से हुआ, परंतु यह विकास दीशाहीन नहीं होता। यह विकास विपरीत दिशा में भी हो सकता है और जैसा कि (3) में बताया गया है, यह दोनों के मिश्रण के रूप में भी हो सकता है।

धर्म के सरल रूप की, धर्म के जटिल रूप से अलग पहचान की जा सकती है। सरल रूप में कुछ महत्वपूर्ण विशिष्ट विशेषताएँ पाई जाती हैं। धर्म के सरल रूप की ये विशिष्ट विशेषताएँ निम्न प्रकार से हैंः

1) धर्म का पुरातन स्वरूप अनादि है अर्थात् इसकी कोई समय अवधि नहीं है। यह जीवन ईश्वर प्रदत है। विश्वास किया जाता है कि जब से पृथ्वी पर मानव का आर्विभाव हुआ तब से यह विद्यमान है।

2) इसकी कोई समय अवधि नहीं, अतः इसका कोई संस्थापक नहीं है और न मानव द्वारा इसे, कोई औपचारिक रूप प्रदान किया गया है।

3) धर्म के इस स्वरूप में विश्वास और कर्मकांड की विधि की जानकारी, मौखिक रूप से एक पीढ़ी द्वारा दूसरी पीढ़ी को दी जाती है।

4) इसमें धार्मिक अनुभव के साथ सौंदर्य बोध भी है। इनमें, धार्मिक अनुष्ठानों और त्यौहारों के अवसरों पर सामूहिक रूप से भाग लिया जाता है।

5) यह निश्चित रूप से विवरणात्मक है, अनुभव की वस्तु है। इसका स्पष्टीकरण नहीं दिया जा सकता है। यह आस्था में विश्वास की प्रतीति है और इसकी व्याख्या करने

या इस पर दार्शनिक वाद-विवाद करने या द्वंद्वात्मक तर्क-वितर्क करने की आवश्यकता नहीं।

धर्म के सरल रूप में धर्म के जटिल रूप की तरह दार्शनिक रूप देने की प्रवृत्ति नहीं है। धर्म का व्यावहारिक पक्ष तथा तंत्र-मंत्र इसमें विद्यमान है। अतः इस प्रकार के धर्मों का कोई धर्म ग्रंथ या पवित्र पुस्तक उपलब्ध नहीं है।

इमाइल दुर्खिम के अनुसार ''जिस प्रकार पेड़ का एक आंतरिक चक्र होता है जो छिपा रहता है और बाहरी चक्र स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, उसी प्रकार धर्म का सरल रूप धर्म का आंतरिक चक्र या रूप है और जटिल रूप बाह्य चक्र या बाहरी रूप।'' उनके अनुसार सरल समाज के अलौकिक चिंतन में दो तत्व विद्यमान होते हैं। इनमें से एक तत्व परम पावन है और दूसरा लौकिक। यह परमपावन तत्व ही है जिसे दुर्खाइम ने धर्म कहा है। लौकिक तत्व को उन्होंने तंत्र-मंत्र या आदिम विज्ञान कहा है। दुर्खाइम की इस परिभाषा के विपरीत मलीनोस्की ने धर्म और तंत्र-मंत्र को परमपावन तत्व कहा है और विज्ञान को लौकिक अंग माना है।

प्रत्येक समाज के अपने खास मिथक (पौराणिक कथाएँ) होते हैं। मिथक विश्वासों को सामान्य रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के पास पहुंचाते हैं। अतः समाज चाहे सामान्य हो या आधुनिक सभी लोग इन विश्वासों को मानते हैं। बहरहाल, इनके बारे में अलौकिकता की भावना प्रत्येक समाज मं अलग-अलग होती है। कुछ समाजों की अलौकिकता के विश्वास में भूत-प्रेत और मृत आत्माएँ भी होती हैं जबकि अन्य इसे निर्वैयक्तिक शक्ति रूप में सर्वत्र व्याप्त मानते हैं। कुछ लोगों के मतानुसार यह अलौकिक महाशक्ति देवी-देवताओं के रूप में या सामान्य देवता के रूप में भी प्रकट होती है। (मजूमदार एवं मदान 1956:152)

सरल समाजों में धार्मिक विश्वासों, तथा इनके उदय को व्याख्यायित करने का सर्वप्रथम प्रयास, ई.बी. टेलर द्वारा किया गया। उन्होंने जीव-वाद का सिद्धांत प्रतिपादित किया, जो जीव तत्व में विश्वास रखता है। अतः वे इसे जीववाद कहते हैं। उनका कहना है कि धर्म के अस्तित्व में आने के अनेक कारण हो सकते हैं, परंतु इसमें विश्वास सबसे महत्वपूर्ण हैं।

धर्म के सरल रूप के विकास में टेलर में निम्नलिखित क्रम में परिकल्पना की है,

1) **निम्न-जीववाद** : नीति निरपेक्ष है, अर्थात् है, अर्थात् मृत्यु के बाद जीव (आत्मा) ऐसी स्थिति में बना रहता है जिसमें जीवन के बाद मृत्यु से इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

2) **उच्च-जीववाद** : ''प्रतिफल सिद्धांत' पर आधारित, अर्थात् जीवन काल के आधार पर जीव को पुरस्कार या दंड दिए जाते हैं।

टेलर के विरोधियों के अनुसार धर्म के इतिहास में जीववाद काफी बाद में विकसित हुआ। वस्तुतः जीववाद वह विश्वास है जिसके अनुसार प्रकृति में विद्यमान प्रत्येक वस्तु में जीवन है और वह जीव-धारी है। अन्य चिंतकों के साथ मैक्समूलर जैसे समाजशास्त्रियों ने भी ऐसी सिद्धांत का प्रतिपादन किया है।

मारेट के द्वारा प्रतिपादित प्राणवाद का मूल रूप "मानावाद'' है। यह सिद्धांत इस धारणा आधारित है कि आदिम जाति का समस्त धार्मिक जीवन उनकी कतिपय समझ में न आने वाली व्यक्ति निरपेक्ष, अभौतिक तथा सर्वव्यापी अलौकिक शक्ति में विश्वास है। यह शक्ति विश्व में गोचर अथवा अगोचर सभी पदार्थों में विद्यमान है। यह मानव की इन्द्रियों की पहुँच से बाहर है। परंतु यह भौतिक शक्ति या किसी ऐसी अन्य उत्कृष्ट शक्ति के रूप में मानव के आसपास के पदार्थों में प्रकट होती है, जिसकी मनुष्य अपने आप में कल्पना कर सकता

है। यह किस मात्रा में किसी व्यक्ति या पदार्थ में विद्यमान है, इसकी तीव्रता में अंतर हो सकता है परंतु प्रत्येक अवस्था में वह एक समान है। इस प्रकार के विश्वासों के लिए मेलेन सिनरूस ने "माना'' शब्द का प्रयोग किया है। मेरेट ने उसे "प्राणवाद" या "मानावाद'' कहा है (ओप. सिट. 1956 : 156)।

बिहार सिंहभूमि के ''होस'' में इसी प्रकार का धार्मिक विश्वास प्रचलित है, जिसे प्रसिद्ध समाज शास्त्री डी.एन. मजूमदार ने बोंगावाद कहा है। ये लोग "बोंगा'' सिद्धांत पर विश्वास करते हैं जो पेड़ों, प्राकृतिक पदार्थों और साइकिल जैसे मानव निर्मित वस्तुओं आदि में भी विद्यमान है। यह अस्पष्ट लौकिक शक्ति की विश्व व्यापकता है जो विश्वासकर्ताओं के अनुसार सभी प्रकार की ऊर्जाओं का कारण है।

फ्रेजर के अनुसार, जीवन का मुख्य संकट झेलने के लिए धर्म और तंत्र-मंत्र दो रास्ते हैं। आदिम समाज में मनुष्य ने जीवन की वास्तविकताओं को झेलने के दो तरीके निकाले थे। एक तरीका तंत्र-मंत्र (जादू-टोना) का है। इसमें विश्वास करने वाले अलौकिक शक्ति के माध्यम से कार्य सिद्ध करते हैं। उदाहरण के लिए जादुई मन्त्रों के उच्चारण से अलौकिक आत्माएं जादूगर की आज्ञा का पालन करती हैं।

दूसरा तरीका, अलौकिक शक्तियों का सेवक बनकर उसकी पूजा करना है। यही धर्म कहलाता है। परंतु फ्रेजर के मतानुसार, धर्म के सरल रूप के रूप में तंत्र-मंत्र और धर्म आदिम समाज में भी विद्यमान था। विज्ञान का आखिरी चरण तंत्र-मंत्र की तरह कारण और प्रभाव पर निर्भर करता है। परंतु तंत्र-मंत्र के विपरीत यह वास्तविक अन्योन्याश्रय पर निर्भर है, जिसको सिद्ध किया जा सकता है। इस प्रकार तंत्र-मंत्र, धर्म और विज्ञान समाज में एक ही वास्तविकता के तीन चरण हैं।

धर्म के जटिल रूप की मुख्यतया निम्नलिखित विशेषताएँ हैं। ये धर्म के सरल रूप से मूलतः भिन्न हैं:

1) इसका अपना इतिहास है। अतः इसके मूल का पता लगाया जा सकता है।

2) यह संस्थापित धर्म है। संस्थापक अलौकिक (ईश्वरीय) शक्तियों से संपन्न है, उसे ईश्वर का अवतार ईश्वर का पुत्र, या ईवर का संदेशवाहक माना जाता है। संस्थापक को भक्त मुक्तिदाता मानते हैं।

3) इसके विश्वास और धार्मिक कृत्यु संहिताबद्ध तथा पुस्तक के रूप में उपलब्ध है। धार्मिक पुस्तकों को परम पवित्र माना जाता है और यह भी माना जाता है कि उनमें ईश्वर या उसके प्रतिनिधि के पवित्र शब्द हैं और देवता के रूप में उनकी पूजा की जाती है।

4) धर्म के इस रूप में बहुत ज्यादा व्यक्तिवाद है। धार्मिक चमत्कार के व्यक्तिगत अनुभव पर इसमें बल दिया जाता है। संस्थापक के व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द आस्था संगठित है।

5) यह धर्म का बहुत ही उच्च बौद्धिक स्वरूप है। इसमें अनेक सिद्धांत प्रतिपादित हैं, जिनमें इनके भक्तों को विश्वास कर उनका अनुसरण करना होता है। विद्धतापूर्ण तार्किक विकास के साथ इनमें नए सिद्धांत जोड़े जाते रहे हैं। नए भाष्यकार उसी आध्यात्मिक परंपरा में होते हैं। इसके परिणामस्वरूप अनेक पंथों और संप्रदायों का निर्माण होता है। इस सिद्धांतवादी प्रणाली को चलाए रखने तथा खास सिद्धांत का प्रचार करने के लिए धर्म विशेषज्ञों, प्रचारकों और साधुओं का एक वर्ग होता है जो अपना समस्त जीवन इस कार्य के लिए समर्पित कर देते हैं।

जटिल धर्म की मुख्य विशेषताएँ आगे और विस्तार से बताने के लिए हम आपको बुद्ध धर्म का उदाहरण देते हैं।

धर्म के मिश्रित रूप में सरल तथा जटिल धर्म के इन दोनों रूपों के मिले-जुले तत्व मिलते हैं। इस धर्म के बौद्धिक स्पष्टीकरण है, परंतु इसका कोई इतिहास नहीं है। इस प्रकार के धर्म का सर्वोत्तम उदाहरण हिंदू धर्म है, जिसे परंपरागत रूप में सनातन धर्म कहा जाता है।

1.2.1 धर्म एक सामूहिक तत्व है (Religion is a Group Phenomenon)

धर्म में लोगों का समूह शामिल होता है। धर्म सामूहिक रूप से मानव विश्वासों और आचारों की प्रणाली है। सभी धर्मो में सामूहिक प्रार्थना पर बल दिया जाता है। उत्सवों और अनुष्ठानों के अवसरों पर लोग एकत्रित होते हैं। एम.एन.श्रीनिवास (1978:202) ने कुर्ग के गांवों के अध्ययन के दौरान पाया कि ग्रामीण उत्सवों में गांव के लोग सामूहिक रूप से नाचते हैं।, सामूहिक शिकार करते हैं और साथ ही सामूहिक रात्रि भोजन भी होता है। सामूहिक रात्रि भोजन जिस में पूरा गांव भाग लेता है ''उरोम'' (Urome) (अर्थात ग्रामीण तालमेल) कहलाता है। दुर्खाइम (1912) ईश्वर और समाज में इतनी अधिक समानता देखते हैं कि ईश्वर की आराधना को समाज की ही पूजा कहता है। दुर्खाइम के अनुसार ईश्वर मानव द्वारा सृजित परिकल्पना है और साथ में यह एक सामाजिक सृजन का परिणाम है। ईश्वर का सृजन उस सामूहिक अनुभूति (या उत्तेजना) में निहित है जिसमें लोग एकत्रित होकर अनुष्ठान सम्पन्न करते हैं।

संभव है कुछ लोगों की धारणा हो कि अपनी धार्मिक निष्ठा को सार्वजनिक रूप से अनुष्ठानों अथवा धार्मिक उत्सवों द्वारा सबके सामने प्रकट नहीं करना चाहिए। उनके अनुसार धर्म पर्ण रूप से व्यक्तिगत विषय है। कुछ माता-पिता तो अपने बच्चों की धर्म संबंधी आस्थाओं की ओर से बिल्कुल चिंतित नहीं होते क्योंकि वे मानते हैं कि यह बच्चों का व्यक्तिगत मामला हैं कुछ लोग ''मेरा हाथ जगन्नाथ' की घोषणा करते हैं, तो कुछ लोग ''अपने कर्म को ही अपना धर्म' मानते हैं। अब आपके मन में यह सवाल उठ सकता है कि क्या इन वैयक्तिक विश्वासों से धर्म बनता है या नहीं? इसका उत्तर यह है कि जिस सीमा तक ये वैयक्तिक विश्वास सामूहिक और सामाजिक मूल्यों और प्रतिमानों के संदर्भ में ही परिभाषित होते हैं उस सीमा तक उन्हें धर्म माना जा सकता है।

बहुत से लोग धर्म की आलोचना भी कर सकते हैं और हम में से कुछ मिलकर इसे नकार भी सकते हैं। फिर भी तथ्य तो यही है कि चूंकि धर्म संस्कृति का एक अंग है, और जैसे-जैसे समाज में हम परिपक्व होते जाते हैं, उसी प्रकार धार्मिक मूल्यों, आस्थाओं और कर्मों को भी हम अच्छे से समझने लगते हैं।

1.2.2 'अलौकिक' और 'पवित्र' (Supernatural' and the 'Sacred')

प्रायः हर धर्म में मुख्य रूप से एक दैविक या अलौकिक शक्ति का स्थान होता है। यह दैविक शक्ति सामान्यजन के अनुभवों के परे है। वह 'असीम' है, वही 'सर्वशक्तिमान' है और असाधारण है। विख्यात नृशास्त्री टेलर (1871) के अनुसार ''दैविक सत्ता में विश्वास रखना ही धर्म की परिभाषा है। दैविक सत्ता में विश्वास रखने के अर्थ में अदृश्य शक्ति, देव दूतों और दिवंगत पूर्वजो की आत्मा पर विश्वास करना भी निहित हो सकता है। आस्तिक लोग इन अलौकिक शक्तियों को उनकी शक्ति और प्रकार्यों के आधार पर श्रेणीबद्ध करते हैं। उदाहरणतः यह मान्यता है कि ब्रह्मा, विष्णु और शिव, इन तीनों हिन्दू देवताओं का प्रकार्य क्रमशः सृष्टि की रचना, उसका पालन-पोषण और उसका विनाश करना है।

यद्यपि दैविक शक्ति ''सर्वशक्तिमान'' है, 'अनंत' है और इन्द्रियातीत है फिर भी कुछ लोग उसे मानव रूप में स्वीकार करते हैं। इसे दैविक शक्ति को समझने के लिए लोगों का प्रयास माना जा सकता है। लोगों का यह भी विश्वास है कि दैविक शक्ति को खुश और संतुष्ट कर उनकी से वे कुछ वरदान पा सकते हैं। कुछ नैसर्गिक आपदाओं को उसी दैविक शक्ति का क्रुद्ध और प्रचंड रूप माना जाता है। फिर भी यह अनिवार्य नहीं है कि हमेशा ही दैविक शक्ति को मानवीय रूप दिया जाये। दैविक शक्तियां हवा, आग, पर्वत आदि प्राकृतिक शक्तियों के रूप में भी मान्यता पाती हैं।

फिर भी यह तथ्य बना रहता है कि विश्व भर के सभी धर्मों में अलौकिक शक्ति की धारणा और इसका अहसास मौजूद है। वास्तव में ये कुछ ऐसे बुनियादी क्षेत्रों में से एक है जहां धर्म विषय विशेषज्ञ और आम आदमी अर्थात दोनों पूजा अर्चना करते हैं। उस शक्ति को आदर देते हैं और पवित्र चीजों पर अपना विश्वास बनाए रखते हैं।

बॉक्स 1.1 अलौकिक और पवित्र

यह भी जरूरी नहीं कि सभी दैविक शक्तियां "पवित्र'' हों। दैविक शक्तियां भी कई प्रकार की होती हैं जैसे शैतान, दुष्ट आत्मा आदि जो कि शक्तिमान तो हैं परन्तु ''दुष्ट" मानी जाती हैं। बाइबिल के अनुसार जब सैटन (शैतान) मरूभूमि में तपस्या कर रहा था तो उसने एक बार तो ईसा मसीह को भी अपनी शक्ति से विचलित कर दिया था। कुछ ऐसी भी निष्पक्ष दैविक शक्तियां हैं जो न तो क्षति पहुंचाती हैं और न ही किसी प्रकार की सहायता करती हैं। हर प्रकार की दैविक शक्ति मनुष्य के मन में भय अथवा श्रद्धा को जन्म देती है।

कुछ विद्वानों का मत है कि "पवित्र'' और ''लौकिक" चीजों में स्पष्ट अंतर है। उनके अनुसार यह विभेद वैसे ही है जैसे कि पारलौकिक और इहलौकिक के बीच, पवित्र और असाधारण के बीच । दुर्खाइम (1912) के अनुसार भी "पवित्र'' लौकिक वस्तुओं से सर्वथा भिन्न है और उसे रखा जाता है। ''लौकिक' का अभिप्राय है अपवित्र, धर्मनिरपेक्ष। अनुष्ठान ही ऐसे अवसर हैं जब "पवित्र'' और सांसारिक वस्तुओं के बीच संचार होता है। यदि कोई व्यक्ति "पवित्र कार्य में हिस्सा लेना चाहे तो पहले उसे अपने शुद्धिकरण की प्रक्रिया करनी पड़ती है। कई विद्वानों ने इस ''पवित्र'' तथा ''लौकिक' के पार्थक्य की आलोचना भी की है। चर्च या मंदिर आदि को धर्म का केन्द्र मानने वाले इस प्रकार के पार्थक्य को बढ़ावा देते हैं। विद्वानों का यह भी कहना है कि दैनिक जीवन की लौकिक या सांसारिक गतिविधियों में हमें ''पवित्रता" का आभास होता है तो दूसरी ओर दैनिक सांसारिक जीवन में पवित्र और लौकिक के बीच अंतःक्रिया होती ही रहती है।

1.2.3 धर्म/विश्वास और अनुष्ठान (Belief and Ritual)

विश्वास मस्तिष्क की एक स्थिति या भाव है। इस स्थिति में व्यक्ति किसी व्यक्ति या वस्तु के होने में आस्था या भरोसा रखता है। यह कहा जा सकता है कि विश्वास ऐसा विचार या धारणा है जिसका मूल्य किसी कथन की सत्यता या किसी व्यक्ति के होने के यथार्थ के बराबर है। इस दृष्टि से धार्मिक विश्वासों से हमारा अभिप्राय समूह-विशेष के धार्मिक सिद्धांत अथवा सिद्धांत के स्वरूप से है। अधिकांशतः धार्मिक सिद्धांत ईश्वर अथवा अलौकिक शक्ति की पूजा से संबंधित होते हैं। उदाहरण के लिए टेलर (1871) ने धर्म को अलौकिक जीवों मे विश्वास (जीववाद) के रूप में परिभाषित किया है। ये अलौकिक जीव भूत, आत्माएं, देवता आदि हैं। मेरेट (1909) ने धर्म को "माना'' जैसी अलौकिक शक्ति में विश्वास (जीवात्मवाद या प्राणवाद) के रूप में परिभाषित किया है। यहाँ जब यह कहा जा रहा है कि विश्वास एक

अलौकिक अवधारणा है, तो उसका अर्थ है कि यह अवधारणा ऐसे क्षेत्र से जुड़ी हुई है जो इंद्रिय-ज्ञान से परे है।

आस्था और अनुष्ठान आपस में जुड़े हैं। प्रत्येक अनुष्ठाान प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से आस्थाओं के समुच्चय पर आधारित होता है। वास्तव में हम कह सकते हैं कि आस्था के बिना अनुष्ठान संभव नहीं है। ये इसलिए है क्योंकि आस्था ही अनुष्ठान के उद्भव और विकास के लिए मंच तैयार करती है। अनुष्ठान पवित्र शब्दों और पुनरावृत क्रियाओं के प्रतीकात्मक श्रृंखला होते हैं और इन्हें भली भांति व्याख्यायित करने के लिए आस्थाओं को समझना पड़ता है।

एकदम बुनियादी स्तर पर यह कहा जा सकता है कि विश्वास किसी समूह के ज्ञान की प्रणाली अथवा वास्तविकता को जानने की प्रणाली का भाग है। अर्थात यह मनुष्य की समझ और अनुभव के दायरे का हिस्सा है। यह व्यक्ति को जीवन की विविध जिज्ञासाओं के अर्थ और व्याख्या उपलब्ध कराता है। इस प्रकार धार्मिक विश्वास उसे जीवन के अबूझ प्रश्नों, जैसे- मृत्यु, कष्ट, सामाजिक अन्याय आदि के उत्तर देता है। धार्मिक विश्वास अधिकतर स्थितियों में ऐसी घटनाओं की व्याख्या करता है, जिनकी दूसरे तरीके से व्याख्या कठिन होती है।

धर्म के अध्ययनों में विश्वास और अनुष्ठान के बीच अंतर रखा जाता है। जैसा कि पहले स्पष्ट किया जा चुका है, विश्वास विचारों के बनने की प्रणाली है। दूसरी ओर, अनुष्ठान क्रिया की प्रणाली है। विश्वास के बारे में आगे विस्तार से चर्चा की जाएगी। अनुष्ठान की परिभाषा इन शब्दों में दी जा सकती है कि यह आमतौर पर समारोहों या विशिष्ट संस्कारों के अवसर, पर, बार-बार दोहराया जाने वाला कार्य या कार्य-पुंज है। जिसके माध्यम से हर समुदाय अपनी आस्था मूर्त रूप में अभिव्यक्त करता है। यह एक निश्चित विन्यास वाला क्रियाकलाप है जिसका उद्देश्य मानवीय परिस्थितियों को नियंत्रित/नियमित करना होता है। अनुष्ठानों में धार्मिक विश्वासों का मूर्त रूप दिखाई देता है। अंत्येष्टि संस्कार इसका ऐसा प्रमुख उदाहरण है जिससे आप सबका परिचय होगा ही। हर अनुष्ठान सामूहिक रूप से मिलने का एक अवसर प्रदान करता है और इस तरह ऐसे अवसरों पर लोगों में समाजगत मूल्यों में विश्वास मजबूत होते हैं वॉलेस (1966) के अनुसार, अलौकिक शक्ति को सक्रिय बनाने के लिए धर्म के मूलभूत घटक के रूप में अनुष्ठान को प्रयोग में लाया जाता है। अनुष्ठानों से धार्मिक मिथकों और ब्रह्मांड-विज्ञान (Cosmology) के महत्वपूर्ण पक्षों का मूर्त रूप सामने आता है। ये अक्सर धर्म का पालन करने वालों की चिंताओं और पूर्वाग्रहों को व्यक्त करते हैं। दूसरे शब्दों में, विश्वास और अनुष्ठान एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक तरह से एक की चर्चा किए बिना दूसरे के बारे में बताना कठिन है।

अनुष्ठान के विविध रूप हैं जैसे- पूजा, जंतर-मंतर, दैववाणी, जादू-टोना आदि। आइए देखें कि इनमें से प्रत्येक का अर्थ क्या है। पूजा (prayer) किसी अलौकिक शक्ति से की गई याचना है। जंतर-मंतर (sorcery) में जान बूझकर और स्पष्ट रूप से जादुई शक्ति के प्रयोग द्वारा किसी को नुकसान पहुंचाने का इरादा होता है। राजनीतिक रूप से विकसित समाजों में इनके इस्तेमाल की बहुत कम संभावना होती है। शकुन-विचार या दैववाणी (divination) अज्ञात जानकारी करने का धार्मिक अनुष्ठान है। यह अलौकिक तत्वों और शक्तियों से प्राप्त संकेतों को समझकर दुर्भाग्य के कारणों का पता लगाने की प्रक्रिया है। जादू-टोना (magic) अलौकिक शक्तियों को नियंत्रित करने का तरीका है। अनुष्ठान के अन्य रूपों में यह रूप ज्यादा यांत्रिकीय और मनुष्य की स्वेच्छा से परे है।

बोध प्रश्न 1

i) विश्वास से क्या अभिप्राय है? विश्वास और अनुष्ठान में क्या अंतर है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ii) अनुष्ठान आमतौर पर क्या प्रदर्शित करते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.2.4 नैतिक आचार संहिता

जैसा कि पिछले भाग में कहा जा चुका है धार्मिक विश्वास और अनुष्ठान मनुष्यों के बीच एक दूसरे से संपर्क स्थापित करने में सहायक होते हैं। मनुष्य जब अपने आपको "पवित्र" से जोड़ते हैं तो साथ ही साथ ऐसा करने से एक दूसरे के बीच संबंध भी स्थापित करते हैं। ईश्वर से संपर्क स्थापित करने के लिये कुछ आचार संहिताएं नियत की जाती हैं। इस प्रकार धर्म से ही नैतिक या आचार संहिताएं उपजती हैं। उदाहरण के लिये, यहूदी-ईसाई धर्म के 'दस आदेश' (Ten Commandments) उसका मूलभूत भाग हैं। ये आदेश एक प्रकार की नैतिक या आचार संहिता है जो मनुष्य को ईश्वर से जोड़ती है। धर्म नैतिक संहिताओं का स्रोत है, यो कहें कि नैतिक या आचार संहिता के बिना धर्म संभव ही नहीं है। अन्य सामाजिक संस्थाओं की अपेक्षा धर्म अधिक स्पष्ट रूप से सही और गलत के बीच भेद कर सकता है।

समाज में आचार संहिताओं के अनेक स्रोत हैं जैसे परिवार, शिक्षा, कानून आदि। जो लोग धर्म विशेष में आस्था रखते हैं, उनसे यही अपेक्षा की जाती है कि वे उस धर्म की नैतिक संहिताओं का पालन करें। इस प्रकार वर्ग विशेष के सभी सदस्य एक प्रकार की नैतिक संहिताओं का पालन करते हैं। आज के युग में धर्म और उसकी अनेक नैतिक संहिताएं अधिक उपयोगी हैं क्योंकि कुछ लोगों का यह विश्वास है कि विज्ञान अधिकाधिक रूप से अमानुषिक होता जा रहा है। एक ओर तो अरबों रुपये अस्त्र-शस्त्र, सैन्य बल व तकनीकी आदि पर खर्च किये जा रहे हैं वहीं दूसरी ओर अफ्रीका, लैटिन अमेरिका आदि विश्व के अनेक भागों में लोग अकालग्रस्त हैं। इस संदर्भ में देखें तो सैन्य शक्ति पर किये जाने वाला

खर्च एक नैतिक प्रश्न बन जाता है। उदाहरण के लिये, अहिंसा के धार्मिक सिद्धांत का पालन करने वालों के लिए विज्ञान का युद्ध में उपयोग का विरोध करना नैतिक दायित्व का मुद्दा बन जाता है।

सोचिए और करिए

अब तक धर्म की सामाजिक परिभाषा को समझाने के लिये धर्म की चार विशेषताओं पर चर्चा हुई है। अब आप अनुभाग 1.2 और 1.3 को ध्यान से पढ़कर धर्म की अपनी समाजशास्त्रीय परिभाषा का निर्माण कीजिए। आपके दिशा-निर्देश के लिये नीचे धर्म की एक परिभाषा दी गई है।

धर्म नैतिक संहिताओं, विश्वासों और आचरणों की एक व्यवस्था है। यह व्यवस्था धर्म में आस्था रखने वालों के समुदायों को अलौकिक या असाधारण शक्ति के साथ संपर्क स्थापित करने में सहायक होती है।

बोध प्रश्न 2

i) अलौकिक शक्ति को परिभाषित कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ii) क्यों और कैसे धर्म नैतिक संहिता का एक स्रोत बन जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

iii) धर्म की समाजशास्त्रीय विशेषताओं को सूचीबद्ध कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.3 धर्म के प्रज्ञावादी सिद्धांत (Intellectualist Theories of Religion)

प्रज्ञावाद का अभिप्राय है विषय विशेष की व्याख्या के लिए प्रयुक्त तर्कविधि। प्रज्ञावादी धारणा को मानने वाले विद्वानों के अनुसार ''धर्म'' का उद्‌भव प्राकृतिक तथ्यों के प्रति व्यक्ति की तर्कसंगत प्रतिक्रिया के रूप में हुआ।

धर्म के उद्‌भव और विकास पर विद्वानों के विचार हमें पहले-पहल मिशनरियों और साहसिक यात्रियों की रिपोर्ट में मिलते हैं। इनमें आदिम समाजों में पाए जाने वाले धर्म के रूप का विवरण दिया गया है। उदाहरण के तौर पर डी. ब्रॉसेस (1760) को लें जिसने एक सिद्धांत प्रतिपादित किया। इस सिद्धांत के अनुसार धर्म का उद्‌भव जड़ पूजावाद (fetishism) से हुआ जिससे जादुई ताबीजों या वस्तुओं में विश्वास किया जाता है। इसी प्रकार पुर्तगाली नाविकों ने पश्चिमी-अफ्रीकी तटवर्ती नीग्रो लोगों के बारे में लिखा कि ये जनजातीय लोग जड़ वस्तुओं और जानवरों की पूजा करते थे। कॉम्टे (1980) ने इस सिद्धांत पर विचार करते हुए लिखा कि कालांतर में जड़ पूजा का स्थान बहुदेववाद ने ले लिया। कॉम्टे के इस सिद्धात के स्थान पर बाद में प्रेतवाद (ghost theory) और फिर जीवात्मवाद (soul theory) का बोलबाला हुआ। बाद में आने वाले इन सिद्धांतों को धर्म के अध्ययन के प्रज्ञावादी सिद्धांतों के रूप में जाना जाता है क्योंकि इन दोनों सिद्धांतों का यह मत है कि आदिम मानव तर्क बुद्धिपरक प्राणी था, भले ही प्राकृतिक तथ्यों की व्याख्या के प्रयास कुछ-कुछ अपरिपक्व थे।

इससे पहले कि हम प्रज्ञावादी सिद्धांतों पर विचार करें, हमें धर्म के उद्‌भव के बारे में एक और अपने समय के बहत सशक्त, सिद्धांत पर ध्यान देना होगा। यह है प्रकृति-मिथकवाद। धर्म के अध्ययन के संदर्भ में कालक्रम की दृष्टि से प्रकृति-मिथक सिद्धांत का स्थान उपर्युक्त सिद्धांतों से पहले आता है। अतः इसकी चर्चा यही कर लेना बेहतर है।

1.3.1 प्रकृति-मिथकवाद (Nature-Myth School)

भारत-यूरोपीय धर्मों से संबद्ध प्रकृति-मिथकवाद जर्मनी में उदित हुआ था। उसके अनुसार प्राचीन देवता (चाहे वे किसी भी देश-काल के हों) प्राकृतिक तथ्यों के मानवीकृत रूप है। इस सिद्धांत का प्रवर्तक जर्मन भाषाविद मैक्स मूलर था। अपना अधिकांश जीवन ऑक्सफोर्ड में प्रोफेसर और "फैलो ऑफ ऑल सोल्स' (आक्स्फोर्ड विश्वविद्यालय के एक कॉलेज के प्रोफेसर) के रूप में बिताया। वह संस्कृत के महान विद्वान थे और प्राचीन भारतीय देवताओं में उनकी गहरी रुचि थी। मूलर के अनुसार, मनुष्य तथा प्रकृति के बीच भय, आश्चर्य का संबंध है अर्थात् प्राकृतिक जगत ने मनुष्य के सामने ऐसी दुनिया खोलकर रख दी जिसे समझना उसके लिए संभव नहीं था। फलतः भय तथा विस्मय के वशीभूत प्रकृति की पूजा शुरू कर दी। मैक्स मूलर की मान्यता थी कि विशाल प्राकृतिक वस्तु लोगों के लिए अनंत का प्रतीक बन गई थीं। अंतरिक्ष में विचरण करने वाले सूरज, चांद सितारे तथा उशाकाल और उनकी विशेषताओ को लोग रूपक (metaphor) तथा प्रतीक (symbol) की भाषा में समझते थे।

विकास के इस चरण पर हमें अवश्य पता होना चाहिए कि दिव्य दर्शन सिद्धांत (Vision theories) जिन्हें आगे किया जा रहा था, धर्म के समाजशास्त्र के सर्वांगीण विकास में उनकी अहम भूमिका थी।

मैक्स मूलर (1878) के विचार में समय के साथ इन प्रतीकात्मक प्रतिरूपों ने अपना स्वतंत्र

स्थान बना लिया और प्रतीकों का महत्व उन वस्तुओं से अधिक हो गया जिनका वे प्रतीक प्रतिनिधित्व कर रहे थे। बाद में इन गुणों या विशेषताओं और प्रतीकों का देवताओं के रूप में अवतार हो गया। मूलर का कथन था कि देवताओं के नामों के वाङः मीमांसात्मक (philological) और व्युत्पत्तिपरक (etymological) अर्थों तथा उनसे संबंधित दंतकथाओं की पृष्ठभूमि में आदिकालीन मानव के धर्म का अध्ययन किया जा सकता है। मैक्स मूलर और उनके अनुयायियों ने कभी-कभी अपने सिद्धांतों को हास्यास्पद तक बना दिया। उदाहरण के लिए, उसके अनुसार ट्राय (उत्तर-पश्चिमी एशिया माइनर का एक प्राचीन शहर) घेराबंदी की घटना केवल एक सौर-मिथकवाद थी। इस प्रकार की व्याख्या के समर्थन में ऐतिहासिक साक्ष्य न मिलने के कारण समकालीन विद्वानों ने प्रकृति-मिथकवाद के विरूद्ध कई आरोप लगाए। हर्बर्ट स्पेंसर, एडवर्ड टेलर और एड्रयू लैंग आदि विद्धान प्रकृति मिथकवाद के मुख्य विरोधी थे। इन विद्वानो ने न केवल धर्म की वाड् मीमांसात्मक और व्यत्पत्तिपरक व्याख्या की आलोचना की बल्कि उन्होंने इसके विपरीत एक बिल्कुल ही भिन्न दृष्टिकोण का विकास किया। अगले अनुभाग में हमने इसी दृष्टिकोण से मुख्य विचारों की चर्चा की है। इसमें क्रमशः हर्बर्ट स्पेंसर और एडवर्ड टेलर द्वारा प्रतिपादित प्रेतवाद और जीवात्मावाद सिद्धांतो के बारे में विचार किया गया है।

1.3.2 प्रेतवाद (The Ghost Theory)

जहाँ मैक्स मूलर की रुचि भारत-यूरोपीय धर्मों में थी तो हर्बर्ट स्पेंसर और एडवर्ड टेलर के अध्ययन का केंद्र सरल समाजों में पाया जाने वाला धार्मिक आचरण था। स्पेंसर तथा टेलर के अनुसार सरल समाजों में धर्म के आदि रूप का पता चलता है। टेलर की पुस्तक *प्रिमिटिव कल्चर* सन 1871 में प्रकाशित हुई और इसके ग्यारह वर्ष बाद 1882 में स्पेंसर ने अपने विचारों को प्रकाशित किया। वास्तव में स्पेंसर के इन विचारों का निर्माण पुस्तक के रूप में प्रकाशित होने से काफी पहले हो चुका था। इसलिए यहां धर्म के बारे में स्पेंसर के विचारों की चर्चा पहले की है।

स्पेंसर (1876-96) ने *प्रिंसिपल्स ऑफ सोशियोलॉजी* नामक अपनी पुस्तक के बहुत बड़े भाग में सरल समाज के लोगों के धार्मिक विश्वासों के बारे में चर्चा की है। उसने यह दिखाने का प्रयास किया है कि ज्ञान की मात्रा सीमित होते हुए भी आदिम समाज के लोग तर्कसंगत (rational) थे। वे प्राकृतिक तथ्यों के बारे में तर्कसंगत अनुमान लगाते थे, भले ही उनके ये अनुमान पूर्णतः सही नहीं होते थे। सूरज, चांद, बादलों और तारों के आने-जाने की क्रिया को देखकर आदिम समाज के लोग दृश्य और अदृश्य अवस्थाओं के विचार को समझते थे। इसी तरह उन्हें व्यक्ति के द्वैत का बोध स्वप्नों से होता था। इन विद्धानों के अनुसार सरल समाज के लोगों के लिए स्वप्न वास्तविक जीवन के अनुभव के समान था। इन लोगों की दृष्टि में रात को स्वप्न की स्थिति में व्यक्ति का मन (dream-self) इधर-उधर विचरण करता है जबकि दिन में उसी व्यक्ति की छाया-आत्म (shadow-self) क्रियाशील होती है। लोगों में द्वैत की इस धारणा की पुष्टि अस्थायी तौर पर संवेदना के लुप्त होने के बाद उसके पुनः आ जाने के अनुभव से भी होती है जैसे बेहोश हो जाने के बाद होश में आने पर। आदिम लोगों की दृष्टि में मृत्यु की घटना भी लंबी बेहोशी हालत की तरह थी। द्वैत की इस धारणा को वे प्राणियों, पौधों और भौतिक वस्तुओं पर भी लागू करते थे। सरल समाज में ऐसे विश्वासों का मूर्त रूप देने वाले तरह-तरह के प्रतीक पाए जाते हैं।

स्पेंसर के अनुसार स्वप्न में मृत व्यक्तियों को देखने का यह मतलब समझा जाता था कि मरने के बाद भी अस्थायी रूप से जीवन का अस्तित्व होता है। यह माना गया कि इसी विचार से प्रेत के रूप में अलौकिक शक्ति की संकल्पना का उदय हुआ। स्पेंसर के मत में

प्रेतों के अस्तित्व के विचार से ही देवताओ की धारणा का जन्म हुआ और पूर्वजों के प्रेत ही देवता बन गए । स्पेंसर (1876-96:440) ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रत्येक धर्म का मूल आधार पूर्वजों की पूजा है।

विश्व के बहुत से हिस्सों में आदिम समाजों में सामान्यतया पूर्वजों या अन्य उच्च कोटि के जीवों पर देवत्व के भाव को आरोपित किया जाता है। इसलिए कुछ लोगों को स्पेंसर के सिद्धांत में कुछ सही-सही बातें दिखाई दीं। परंतु यह बात पूर्णतया स्पष्ट है कि स्पेंसर स्वयं भी गलत ढंग के तर्क का दोषी है जिसे वह आदिम लोगों पर आरोपित करता है। स्पेंसर - कभी भी आदिम लोगों के निकट संपर्क में नहीं आया, फिर भी वह उनके तर्क करने के तरीकों के बारे में जानकार व्यक्ति की भांति लिखता है। वास्तव में, यह उसका सरल समाज के लोगों की ओर से स्वयं सोचने का प्रयास है।

लेकिन, हमें यह अवश्य ध्यान में रखना होगा कि धर्म के क्षेत्र में रुचि सृजित करने और इसी के शैक्षणिक अध्ययन को आगे धकेलने में धर्म के समाजशास्त्र से जुड़ा प्रारंभिक अध्ययन सहायक है।

इससे अगले अनुभाग में हमने यह देखा है कि किस प्रकार एक और विद्वान ने भी धर्म के बारे में लगभग स्पेंसर की भांति ही सोचा। इस विद्वान के विचारों का केंद्र प्रेतों के बजाए जीवात्मा रहा है। इसका नाम एडवर्ड बी. टेलर है। उसके सिद्धांत को 'जीववाद' के नाम से जाना जाता है।

1.3.3 जीवात्मवाद या जीववाद (The Soul Theory or Animism)

जैसा कि एनिमा शब्द (लैटिन अर्थ आत्मा) से स्पष्ट है सर एडवर्ड ट्रेलर के जीववाद के सिद्धांत में आत्मा के विचार पर विशेष बल दिया गया है। इस सिद्धांत में धर्म के उद्भव और विकास दोनों पर विचार किया गया है। जिस प्रकार प्रेतवाद में धर्म के उद्भव का मूल प्रेतात्माओं के विचार में निहित है, उसी प्रकार जीवात्मवाद में धर्म के उद्भव का मूल, जीव की आत्मा के विचार में है। टेलर के अनुसार मृत्यु, रोग, दिव्य दृष्टि, स्वप्न आदि के अनुभवों के फलस्वरूप आदिम लोगों के मन में अभौतिक अर्थात् ''आत्मा'' के अस्तित्व का विचार पैदा हुआ। आत्मा का यह विचार बाद में अन्य प्राणियों और यहां तक कि निर्जीव वस्तुओं पर भी आरोपित किया जाने लगा। भौतिक शरीर से परे आत्मा का अस्तित्व होता है और इससे आत्माओं में विश्वास का उदय हुआ। टेलर ने धर्म की न्यूनतम परिभाषा देते हुए कहा है कि धर्म का उद्भव आत्माओं में विश्वास से हुआ।

हम यहां जिक्र कर सकते हैं कि टेलर के जीववाद के सिद्धांत में पवित्र और अलौकिक षति के मूल तत्व शामिल हैं। लेकिन फिर भी टेलर की परिभाषा इतनी सामान्य है कि इससे भरोसे और विश्वास से जुड़ी सभी बातों को धर्म का रूप दिए जाने की संभावना होती है। टेलर के सिद्धांत की चर्चा करते समय हमें अवश्य ध्यान में रखना होगा कि धर्म सामाजिक अर्थ को समझने में यह सिद्धांत महत्वपूर्ण रूप से अग्रणी प्रयास था।

टेलर के मत में ये आत्मा ही बाद में देवताओं के रूप में मानी जाने लगती हैं। उनमें शक्तियां निहित हैं और वे मनुष्यों के भाग्य की नियंत्रक होती हैं। संक्षेप में यही टेलर का जीववाद का सिद्धांत है। ठीक जिस प्रकार स्पेंसर के प्रेतवाद की आलोचना हुई, उसी प्रकार की आपत्तियां टेलर के जीववाद के प्रति भी लगाई गई। यह बात स्पष्ट है कि टेलर ने अपने ही विचारों को सरल समाज के लोगों की विचार प्रक्रिया पर आरोपित किया। हमारे पास यह जानने का कोई साधन नहीं है कि सरल समाज के लोग वास्तव में यही या इससे कुछ

अलग बात सोचते थे। टेलर का सिद्धांत भी भ्रामक तर्क के दोष से ग्रस्त है। स्वैन्टन (1924 : 358-68) ने टेलर की आलोचना इसलिए की, क्योंकि उन्होंने ऐसे कारण-सिद्धांतों का प्रतिपादन किया जिन्हें सिद्ध नहीं किया जा सकता था। टेलर यह बात ज़ोर देकर कहते हैं कि मृत्य, रोग और स्वप्नों के अनुभव से इन लोगों को एक अभौतिक सत्ता के अस्तित्व पर विश्वास करना पड़ा। यह टेलर का एक अनुमान मात्र है। टेलर इस अनुमान को स्पष्ट अनुमान के रूप में हमसे स्वीकार कराना चाहते हैं। परंतु यह सिद्ध कर पाना संभव नहीं है कि टेलर का यह अनुमान एक स्पष्ट या एकमात्र संभव अनुमान है। अनुमानों की दुनिया में तो और भी हजारों अनुमान लगाए जा सकते हैं।

दूसरे हमें कोई ऐसी तार्किक प्रक्रिया समझ में नहीं आती जिससे आदिम लोग आत्मा संबंधी विचार से प्रेतात्मा के विचार तक पहुँच सकें। वास्तव में जीवात्मा की संकल्पना और प्रेतात्मा की संकल्पना दोनों एक-दूसरे से पूर्णतया भिन्न हैं, यहां तक कि एक-दूसरे के विपरीत भी हैं।

बॉक्स 1.2 जादू-टोने पर टेलर के विचार

धर्म पर टेलर के जिस सिद्धांत का यहां विचार किया जा रहा है वह तब तक पूर्ण नहीं होगा जब तक कि हम जादू-टोने के संबंध में उनके विचारों को उल्लेख न कर लें। टेलर के विचार में सरल समाज के लोगों का धर्म तर्कसंगत है और वह पर्यवेक्षणों और उन पर आश्रित अनुमानों पर आधारित है। टेलर ने जादू-टोने के प्रयोग में भी तर्कसंगति के तत्व पर बदल दिया। उनका कथन है कि सरल समाज के लोगों में जादू-टोना भी पर्यवेक्षण और समान तत्वों के वर्गीकरण पर आधारित है। टेलर के अनुसार जादू टोने की कभी-कभी होने वाली असफलता का कारण जादू-टोना करने वाले के द्वारा विभिन्न वस्तुओं के बीच रहस्यमय संबंध का गलत अनुमान लगाना है। जहाँ एक निष्पक्ष दृष्टि की बजाए विचारों के स्तर पर अपने व्यक्तिगत अनुमानों को आरोपित कर दिया जाता है।

टेलर की जादू-टोने के विषय में यह चर्चा प्रज्ञावादी व्याख्या का एक अच्छा उदाहरण है। अगर कोई यह पूछे कि सरल समाज लोगों से गलतियां कैसे हो जाती हैं तो टेलर का उत्तर है कि ये लोग बड़ी चतुराई से जादू-टोने की निरर्थकता पर ध्यान नहीं देते। जब कभी जादू-टोना विफल हो जाता है तो उसकी विफलता को यह कहकर समझाया जाता है कि ऐसा किसी निर्दिष्ट कार्य को न करने से या किसी जरूरी कार्य को नजरअंदाज करने से अथवा किसी विरोधी जादू-टोने के प्रभाव से हआ है।

टेलर के शिष्य एंड्रयू लैंग (1844-1912) ने टेलर द्वारा धर्म पर दिए गए सिद्धांत की आलोचना की। यद्यपि लैंग विकासवादी सिद्धांतों का समर्थक थे, लेकिन वे इस बात से सहमत नहीं थे कि उत्तरवर्ती विकास के रूप में प्रेतों या प्रेतात्मओं में विश्वास से देवताओं के अस्तित्व का विचार उपजा। *मिथ, रिचुअल और रिलीजन* नामक अपनी पुस्तक में लैंग ने बताया कि बहुत से आदिम लोग उच्च कोटि के देवाताओं (high gods) में विश्वास करते. थे और उनके बीच प्रेतात्मा में विश्वास कभी भी नहीं रहा था। जबकि टेलर जैसे प्रज्ञावादियों के अनुसार आदिम लोगों में सर्वज्ञ देव के अस्तित्व को अमूर्त रूप से समझ का अभाव हमेशा था। लैंग (1989 : 2) ने तर्क दिया कि ईश्वर या देवता पर विश्वास ''स्वप्नों'' और ''प्रेतों'' के बारे में चिंतन से विकसित नही हुआ क्योंकि इन दोनों का उद्भव तो स्वयं ही भिन्न-भिन्न स्रोतों से हुआ है। उनकी दृष्टि में ईश्वर में विश्वास पहले से है जो बाद में बिगड़ कर जीववाद में बदल गया। लैंग का एक अद्भुत सिद्धांत था कि एकेश्वरवाद और जीववाद

दोनों धाराएं ईसाई धर्म में हिब्रू और यूनानवादी स्रोतों से आई। धर्म के बारे में लैंग के विचारों को बहत गंभीरता से नहीं लिया गया क्योंकि उन्हें साहित्यिक अधिक और धर्म के अध्ययन में पड़ने वाला नौसिखिया समझा जाता था। ऐसा होते हुए भी हमें यह तो मानना ही होगा कि लैंग द्वारा टेलर की आलोचना ने बहुत से विद्वानों को (इनमें से एक विल्हेम श्मिड भी थे) सरल समाज के लोगों में सर्वशक्तिमान, सर्जक ईश्वर की संकल्पना के विषय में अध्ययन के लिए प्रेरित किया।

टेलर के एक अन्य शिष्य आर.आर.मैरेट (1866-1943) ने जीववादी सिद्धांत की आलोचना का। उन्होंने आर.एच. कॉड्रिंगटन की मैलेनेशिया से एकत्रित सामग्री की ओर ध्यान दिलाया और दावा किया कि प्रेतात्माओं में विश्वास से पहले आदिम लोगों को एक निर्वैयक्तिक (impersonal) शक्ति में विश्वास था। मैरेट ने इस शक्ति को ''माना'' कहा और बताया कि ऐतिहासिक और सैद्धांतिक दोनों दृष्टियों से ''माना'' में विश्वास को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। मैरेट (1915) ने *एन्साइक्लोपीडिया ऑफ रिलिजन एंड एथिक्स* में ''माना'' पर एक लेख लिखा और यह स्थापित किया कि ''माना'' तथा ''टेबू'' (वर्जना) के विचारों से जादुई धर्म की परिभाषा दी जा सकती है। मैरेट ने विकासवादी सिद्धांतों का एकदम परित्याग तो नहीं किया लेकिन उसने टेलर की रचनाओं की जो आलोचना की, उसके परिणामस्वरूप दूसरे विद्वान धर्म के विकासवादी विश्लेषण की वैधता के बारे मे प्रश्न करने को बाध्य हो गए।

1.3.4 जादू-टोने पर निर्भरता (Dependence on Magic)

कुछ विद्वानों का कथन है कि आकस्मिक घटनाओं का मुकाबला करने के लिए धर्म के बजाय जादू-टोना करना अधिक आदिम तरीका है। धर्म और जादू-टोने में आधारभूत अंतर यह है कि धर्म में समर्पण भाव से प्रार्थना, पूजा और धार्मिक अनुष्ठान के माध्यम से अलौकिक शक्ति का सामना किया जाता है। जादू-टोने में हमें अलौकिक शक्तियों को वश में करने के लिए जादू-टोने का सहारा लेना पडता है। सर जेम्स फ्रेजर (1922) ने *द गोल्डन बाउ* नामक पुस्तक में जादू-टोने और आदिम अंधविश्वासों के बारे में लिखा है। उन्होंने सरल समाज के लोगो में बौद्धिक प्रौढ़ता के विकासवादी क्रम को सामने रखा। उनके मत में जादू टोने पर निर्भरता से शनैःशनैः हमारी प्रवृत्ति धर्म की ओर होती है और उसके बाद अंततः वैज्ञानिक चिंतन की ओर। फ्रेजर ने भी अलौकिक जगत को समझने के लिए ओझाओं और पुजारियों या पादरियों जैसे धार्मिक विशेषज्ञों की भमिका पर ज़ोर दिया। सबसे महत्वपूर्ण योगदान है फ्रेजर द्वारा जादू-टोने, इसके विभिन्न प्रारूपों और प्रकायों पर विशेष जार दिया जाना।

धर्म या जादू-टोने को समझने में फ्रेजर ने बड़ा प्रयास किया और धर्म के क्षेत्र में उस योगदान ने समाजशास्त्रियों को प्रेरित किया है।

फ्रेजर ने जादू-टोने के प्रयोग को एक अर्ध-वैज्ञानिक कार्यकलाप के रूप में देखा। उनके अनुसार इस कार्यकलाप के पीछे कुछ न कुछ तार्किक आधार अवश्य है। इसलिए फ्रेजर ने जादू-टोने को ''विज्ञान की नाजायज बहन'' कहकर पुकारा। उन्होंने सरल समाज के लोगों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले जादू-टोने के दो प्ररूपों के बीच अंतर किया है। ये अंतर नीचे दिए गए हैं।

क) समचिकित्सात्मक या अनुकारी जादू (Homeopathic or Imitative Magic)

अनुकारी जादू ''समः समं शमयति'' या समानता के नियम पर आधारित होता है। उदाहरण के लिए- भारत में छोटा नागपुर इलाके के कुछ जनजातीय समूहों में यह

विश्वास है कि गर्जने या गड़गड़ाहट के कारण वर्षा होती है। इसलिए जब वर्षा नहीं होती है तो जनजातीय लोग एक पहाड़ी के शिखर पर जाते हैं और एक छोटे जानवर की बलि चढ़ाने के बाद वे पहाड़ के ढलान पर बड़े-बड़े शिलाखंड और पत्थर लुढ़काते हैं। इनके ढलान पर लुढ़कने से ज़ोरदार गड़गड़ाहट होती है। इस प्रकार जनजातीय लोग सोचते है कि यह गड़बड़ाहट गर्जन के समान है और इसके बाद वर्षा होगी।

ख) संक्रामक जादू (Contagious Magic)

फ्रेजर के अनुसार दूसरे प्रकार का जादू इस विचार पर आधारित है कि कोई वस्तु जब किसी से संपर्क में आती है तो वह हमेशा उसके संपर्क में रहेगी। अतः यहां संक्रमण का नियम लागू होता है। यहाँ जो आधारभूत धारणा कार्यरत् है वह है जनजातीय लोगों का यह विश्वास कि व्यक्ति विशेष के कपड़े आदि चीजें उस व्यक्ति के एक अंश का प्रतिनिधित्व करती हैं। इसी तरह व्यक्ति विशेष के कटे हुए बाल या नाखून भी उस व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसके वे वास्तव में होते हैं। प्रायः जादू-टोना करने वाले ओझा व्यक्ति विशिष्ट के जीवन को प्रभावित करने के लिए इन वस्तुओं का प्रयोग करते हैं। वे उस व्यक्ति के कपड़े, अंशों, बालों या नाखून पर जादू-टोने का अनुष्ठान करते हैं। सामान्यतः यह कार्य निषेधात्मक प्रयोजनों के लिए किया जाता है, अर्थात जब कोई काम रूकवाना या बिगड़वाना हो तो इस प्रकार के जादू का प्रयोग होता है।

इस प्रकार, फ्रेजर की दृष्टि में, धर्म की तरह, जादू-टोने का प्रयोग भी अलौकिक शक्तियों के साथ समझौता करने के लिये अपने उस वातावरण पर नियंत्रण के लिए होता है जो उन सरल समाज के लोगों के लिए खतरे और विपत्ति का कारण हो सकता है। जब जादू-टोना और उससे संबंधित अनुष्ठान विफल हो जाते हैं तब सरल समाज के लोगों के विचार प्राकृतिक जगत में विद्यमान एवं कार्यरत कही अधिक बड़ी शक्ति की संभावना की ओर मुड़ते हैं। वे शीघ्र ही उस महा प्राकृतिक शक्ति को अपनी पूजा के योग्य समझने लगते हैं। फ्रेजर का कहना है कि इस प्रकार सरल समाज के लोग प्रकृति और जादू-टोने पर निर्भरता को छोड़कर धार्मिक पूजा-पाठ तथा धार्मिक कार्यकलाप की ओर बढ़ते हैं। फ्रेजर के अनुसार, यहाँ मुख्य बात यह स्मरण रखने की है कि धर्म के आगे भी एक अवस्था है। यह अवस्था है - विज्ञान की अवस्था। जब लोग इन ''शक्तियों'' को पहले की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक तार्किकता से समझने लगेंगे, फ्रेजर के अनुसार, तब मनुष्यों की बुद्धि का पूर्ण विकास हो जाएगा। यह समझना महत्वपूर्ण है कि धर्म के इस मूल संबंध और बहिष्कार का स्थान विज्ञान ले लेगा। लेकिन अभी हम यह नहीं जानते कि यह कब और किस प्रकार होगा।

1.4 पूर्व आधुनिक समाज में धर्म

व्यक्ति और सामाजिक समूह पर पड़ने वाले प्रभाव की दृष्टि से, धर्म का अध्ययन निष्चय ही सामाजिक दायरे में होना चाहिए। प्राक्-साक्षर समाजों की तरह ही, आज के समाजों में भी धार्मिक और राजनीतिक तत्वों की पहचान साक्षर समाजों के धार्मिक और आर्थिक सिद्धांतों की पहचान से भी जुड़ी है। साक्षर समाजों के धार्मिक और आर्थिक तत्वों का वेबर ने पश्चिमी और पूर्वी सभ्यताओं के संदर्भ में अध्ययन किया। मैक्स वेबर (1958,1963) ने विश्व के प्रमुख धर्मो-हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, कैथोलिक और प्रोटेस्टैंट धर्मों, इस्लाम, कन्फ्यूशियन धर्म, ताओइज्म और यहूदी धर्म-की प्रमुख बातों का अध्ययन किया। उसका निष्कर्ष था कि धर्म संस्कृति के मूल सिद्धांत को नए तथा स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करता है और अनुष्ठान सम्पन्न किए जाने की प्रक्रिया में उनके स्वरूप को ज्यादा स्पष्टता से उजागर करता है। धार्मिक विश्वासों के अध्ययन के बारे में वेबर ने ऐतिहासिक और तुलनात्मक दृष्टिकोण अपनाया।

धर्म के समाजशास्त्र और आधुनिक आर्थिक गतिविधियों के बारे में वेबर के अध्ययन में तर्कसंगति की अवधारणा का प्रमुख स्थान है। धर्म के अध्ययन के प्रति उसकी रुचि दो जिज्ञासाओं के कारण पैदा हुई। पहली जिज्ञासा यह थी कि पश्चिमी देशों में ही पूंजीवाद क्यों पनपा जबकि अन्य संस्कृतियों वाले एशियाई क्षेत्रों में बड़ी मात्रा में संसाधन और बड़ी संख्या में शिक्षित लोग थे। दूसरी जिज्ञासा विभिन्न सामाजिक वर्गों में प्रस्थिति या स्तर (status position) के बारे में थी। वेबर ने बताया कि प्रोटेस्टैंट आचार के आधार पर इन प्रश्नों का उचित उत्तर दिया जा सकता है। उसका कहना था कि कैथोलिक पंथ ने आर्थिक गतिवविधियों को नीची नजर से देखने और मुनाफा कमाने वाले को बुरा समझने की प्रवृत्ति पैदा की। दूसरी ओर, प्रोटेस्टैंट धर्म ने हर कार्य को इस आधार पर उचित ठहराया क्योंकि वह ''ईश्वरीय आह्वान'' से ही होता है।

धर्म के समाजशास्त्र के विकास के आरंभिक दौर में धर्म की उत्पत्ति और उसके प्रसार की ओर अधिक ध्यान दिया गया। हमें दो प्रकार की व्याख्याएं मिलती हैं जो हैं,

व्यक्तिपरक व्याख्याएं और समाजपरक व्याख्याएं। व्यक्तिपरक व्याख्याएं धर्म के या तो बोध ज्ञान (बुद्धिवादी) या भाव-प्रवण पक्षों पर ज़ोर देती हैं। ये दोनों प्रकार के विश्लेषण दुनिया भर में पाई जाने वाली जनजातियों पर नृशास्त्रियों और समाजशास्त्रियों द्वारा इकट्ठी की गई सामग्री पर आधारित थे। एडवर्ड बी टेलर (1981) और हर्बर्ट स्पेंसर (1882) दोनों को बुद्धिवादी माना जा सकता है क्योंकि उन्होंने यह कहा कि स्वप्न, अनुगूंज (echoes) और मृत्यु की प्रक्रिया को समझने और उसका विश्लेषण करने के लिये आदिम मनुष्य ने धर्म का सहारा लिया। उनके मत में यदि इन तत्वों की व्याख्या या विश्लेषण विज्ञान कर दे तो ध र्म का कोई अर्थ या महत्व नहीं रहता।

कुछ विद्वान, जैसे पॉल रैडिन (1938), धर्म के भाव-प्रवण पक्ष पर अधिक बल देते हैं। इस विचारधारा के अनुसार धर्म और कुछ नहीं अपितु भयावह परिस्थितियों के निकलने की पूर्व-आधुनिक मनुष्य की एक भावात्मक अभिव्यक्ति है। इस दृष्टिकोण के अनुसार धर्म मनुष्य को उसके शक्तिहीन होने की भावना से उबारता है। दुर्खाइम (1912) ने भी धर्म के भाव-प्रवण भाग पर ही अधिक ध्यान दिया है। उसके अनुसार "पवित्र'' के प्रति विश्वास और उससे संबद्ध अनुष्ठान और कुछ नहीं अपितु एक प्रकार की भावात्मक अभिव्यक्ति है । उदाहरणतः यह तब झलकती है जब आखेटक जनजातियों के सदस्य शिकार से वापिस लौट कर एकत्रित होते हैं और उस समय वे काफी भावुक होते हैं।

इसके साथ-साथ धर्म के विश्लेषण में दुर्खाइम धर्म के सामाजिक आयाम और उसकी प्रकार्यात्मक अनिवार्यताओं की चर्चा करते हैं। दुर्खाइम (1961:52-6) कहते हैं ''धर्म'' विश्वासों और प्रथाओं की वह मिली-जुली पद्धति है जो ''पवित्र'' से संबंद्ध है, अर्थात उन चीजों से जिन्हें अलग जाना जाता है और जिनका अतिक्रमण निषिद्ध होता है। इन विश्वास और आचारों को मानने वाले एक नैतिक संहिता वाले समुदाय (चर्च) का निर्माण करते हैं। दुर्खाइम के अनुसार धर्म का प्रारंभिक रूप टोटमवाद में पाया जाता है। टोटम वह पवित्र वस्तु है जो समाज या समूह विशेष का प्रतीक भी होता है। समूह में एकत्रित व्यक्तियों की ''सामूहिक उत्तेजना'' की अभिव्यक्ति के समय टोटम को परम मान्यता दी जाती है। अनुष्ठान और विश्वास न केवल समूह से पैदा होते हैं अपितु वे समूह की एकात्मता को शक्ति भी प्रदान करते है। दुर्खाइम का यह भी मानना है कि सरल समाज में धर्म किसी न किसी रूप में अवश्य ही जीवंत रहा है क्योंकि धर्म समाज के लिए कछ विशिष्ट प्रकार्य करता है। धर्म का मुख्य प्रकार्य है समाज में आपसी तालमेल बिठाना। इन प्रकार्यात्मक तर्कों को दुर्खाइम के बाद आने वाले विद्वानों ने माना तथा उनकी पुनःरचना भी की। इनमें रैडक्लिफ-ब्राउन (1952), टॉलकट पार्सन्स (1954) और मिल्टन यिंगर (1957) शामिल हैं।

1.4.1 एमिल दुर्खाइम का योगदान

जिस समय बहुत से विचारक धर्म की समाज में भूमिका के बारे में संषय में थे, तब दुर्खाइम (1858-1917) ने समाज के लिए धर्म के सकारात्मक प्रकार्यों की व्याख्या प्रस्तुत की। दुर्खाइम विकासवादियों के तर्कों से संतुष्ट नहीं थे। विकासवादियों का कहना था कि आने वाले समय में धर्म का महत्व घटता जाएगा। धर्म के संबंध में दुखाईम के मुख्य तर्क उनकी पुस्तक *द ऐलीमेंट्री फार्मस ऑफ द रिलीजस लाईफ* में प्रकाशित हुए। यह पुस्तक 1912 में फ्रांसीसी भाषा में प्रकाशित हुई और 1915 में इसका अंग्रेजी अनुवाद हुआ।

दुर्खाइम टोटमवाद का उदाहरणं लेकर धर्म के सामाजिक प्रकायों को स्पष्ट करना चाहते थे। दुर्खाइम ने स्पेंसर ओर गिलेन द्वारा एकत्रित तथा लिखित मध्य ऑस्ट्रेलियाई जनजातियों में प्रचलित टोटमवाद के नृजातिय विवरण को अपने विश्लेषण का आधार बनाया। विश्लेषण के लिए टोटमवाद को चुनने के पीछे दो कारण थे। पहला यह कि वे टोटमवाद को धर्म का प्रारंभिक रूप मानते थे। दूसरा यह कि उनके अनुसार टोटमवादी रीति रिवाजों से पवित्र और लौकिक का अंतर उपजा था। आइए, इन दोनों तत्वों की चर्चा करें।

टोटमवादः धर्म का प्रारंभिक रूप (Totemism, An Elementary A Form of Religion)

दुर्खाइम के अनुसार टोटमवाद केवल इसलिए धर्म का प्रारंभिक रूप नहीं था कि ऐतिहासिक दृष्टि से वह धर्म से पहले अस्तित्व में आया। टोटमवाद संगठन की दृष्टि से सरल था, इसलिए उसे धर्म का प्रारभिक रूप माना गया। चूंकि किसी पूर्ववर्ती धर्म की विशेषताओं का उल्लेख किए बिना ही टोटमवाद को समझा-समझाया जा सकता है, अतः यह एक मौलिक तत्व भी था। दूसरे शब्दों में टोटमवाद की विशेषताएं अपने आप में बेजोड़ थीं। यहां यह नहीं भूलना चाहिए कि दुर्खाइम ने जीववाद और प्रकृतिवाद का खंडन किया था। जीववाद और प्रकृतिवाद इन दोनों में यह माना जाता है कि प्रकृति के बारे में स्पष्ट रूप से न जानने के कारण ही धर्म की उत्पत्ति हुई।

अतः समाजशास्त्र में टोटम शब्द का विशिष्ट अर्थ है। जैसा कि हमने देखा ऐसे बहुत से महत्वपूर्ण पहलू और दशाएं हैं जिन पर आधारित होने से टोटम समूह या कुल का प्रतीक है। अतः हम कह सकते हैं कि टोटम व्यक्तिगत प्रतीक नहीं है बल्कि अत्यधिक सामाजिक हैं।

अंरूता ऑस्ट्रेलिया की एक जनजाति है। इस जनजाति का मूलभूत अध्ययन स्पेंसर तथा गिलेन ने किया था। इन शोधकर्ताओं द्वारा तैयार किए गए नृजातिय विवरण के आधार पर दुर्खाइम ने धर्म पर अपने मत की रचना की।

अंरूता जनजाति कुलों (बसंदे) में बंटी हुई है। एकता के सूत्र में बंधे, एक नाम वाले लोगों के समूह को कुल कहते हैं। अंरुता जनजाति के कुलों में सदस्यता रक्त-संबंधों पर आधारित नहीं होती है। अंरुता जनजाति के कुलों का नाम उनके टोटम के नाम पर होता है। कुल के साथ-साथ उसके सदस्यों के नाम में भी कुछ के साथ टोटम का नाम जुड़ा रहता है। टोटम एक प्रतीक चिह्न है जो समूह या व्यक्ति विशेष की पहचान बताने में सहायक होता है। एक जनजाति के दो कुलों का एक टोटम चिह्न होना असंभव है। अनुष्ठान तथा अन्य धार्मिक समारोहों में टोटम का इस्तेमाल किया जाता है। टोटम के सभी गुणों में सबसे प्रमुख इसका धार्मिक स्वरूप है। टोटम एक पवित्र वस्तु है।

लकड़ी के टुकड़ों तथा पॉलिश किए गए पत्थरों पर टोटम का चिह्न उत्कीर्ण किया जाता है। जिस लकड़ी के टुकड़े या पत्थर पर टोटम उकेरा जाता है, वह भी पवित्र बन जाता

है। उसे चुरिंगा (Churinga) कहा जाता है। चुरिंगा से धार्मिक भाव उत्पन्न होते हैं। महिलाओं और गैर-दीक्षित युवकों के लिए चुरिंगा को निकट से देखने की मनाही है। जिस स्थान पर चुरिंगा को रखा जाता है, वह एर्तनातुलुगा कहलाता है। एतनातुलुंग पवित्र स्थान माना जाता है। यह टोटम विशेष को मानने वाले समूह का शरण-स्थल होता है। यह शांति-स्थल माना जाता है। यदि कोई शत्रु भी एर्तनातुलुंगा में शरण मांगे तो उसे शरण प्रदान की जाती है। चुरिंगा से जख्म ठीक किए जाते है। यह बीमारियों का भी इलाज करता है। इसकी पूजा से टोटम चिह्न वाले जीव विशेष की संख्या में अभिवृद्धि होती है। यह शत्रुओं को दुर्बल बनाता है। अनुष्ठान करने वालों को चुरिंगा से शक्ति प्राप्त होती है। चुरिंगा इसलिए पवित्र होता है क्योंकि उस पर टोटम की आकृति उत्कीर्ण होती है। दूसरे शब्दों में चुरिंगा पूर्वज का शरीर तथा आत्मा है। टोटम को चित्रित करने वाली वस्तु मूर्त रूप में उसे बनाने वालों तथा उसमें विश्वास करने वालों की पहचान व उनकी समूह- इस तरह टोटम एक प्रतीक है। वह किसी और तत्व का प्रतिनिधित्व करता है। वह क्या है? टोटम किसका प्रतिनिधित्व करता है? आपको याद होगा कि टोटम समूह विशेष की पहचान बताने में सहायक होता है। अतः टोटम उस समूह विशेष का प्रतिनिधित्व करने वाला प्रतिक चिह्न है। दुर्खाइम (1964 : 206) का कहना है कि यदि टोटम समाज तथा ईश्वर का एक-साथ प्रतिनिधित्व करता है तो इसका अर्थ क्या यह नहीं हुआ कि ईश्वर और समाज एक ही है? इसका आश्य हआ कि कल का टोटम उस कल के मानवीकरण के सिवाय कछ नहीं है। दूसरे शब्दों में टोटम देवता के रूप में समाज का प्रतीकीकरण करता है। यह संभव है दुर्खाइम के अनुसार जैसे भक्तों के लिए ईश्वर है वैसे ही व्यक्तियों के लिए समाज। ईश्वर तथा समाज का भक्तों और समाज के सदस्यों पर अपार अधिकार होता है। इसलिए ईश्वर की भांति समाज की भी पूजा होने लगती है। यह विश्लेषण ऐसे समाजशास्त्रियों के चिंतन पर विशेष प्रभाव डालता है जो दुर्खाइम के बाद एक के बाद एक रूप से उभरे यह अपने आप में ऐसी पहली देन थी जो मात्र कल्पना के रूप में नहीं बल्कि सामाजिक बल के रूप में धर्म को व्यक्त करती है।

दुर्खाइम के मत में धर्म अंततः समाज के लिए ही कार्य करता है अर्थात धर्म इसे नैतिक समुदाय बनाता है। धर्म के नाम पर वास्तव में समाज की ही पूजा होती है।

पवित्र बनाम लौकिक (Sacred Versus Profane)

टोटम पर केंद्रित विश्वासों और कृत्यों की प्रणाली को टोटमवाद कहते हैं। प्रश्न उठता है कि टोटम क्या होता है ? अक्सर टोटम एक पशु या पक्षी हो सकता है या किसी प्रकार की वनस्पति या ऐसा पूर्वज जिससे समुदाय विशेष की उत्पत्ति हुई मानी जाती है। टोटम पवित्र होता है और इसे विशेष सम्मान दिया जाता है। समुचित विधि-विधान अथवा अनुष्ठान के बिना टोटम से संपर्क करना असंभव है। टोटम, जो कि पवित्र है, से संपर्क करने के लिए व्यक्ति को आंतरिक एवं बाह्य रूप से स्वयं को शुद्ध करना होता है। टोटम को सम्मान देने वाले धर्म में जीव अथवा वनस्पति की प्रत्यक्ष उसी रूप में पूजा नहीं होती अपितु उस तत्व की पूजा होती है जिसकी ये टोटम वाली चीजें प्रतीक हैं। टोटम सामूहिक रूप से कुल की पहचान (clan-identity) के प्रतीक के रूप में काम करता है। कुल का टोटम ही उसके सदस्यों का टोटम होता है।

टोटम के पवित्र जगत के विपरीत लौकिक जगत होता है। लौकिक जगत में सभी मानव जन तथा वे सभी वस्तुएं सम्मिलित होती हैं जो पवित्र टोटम से अलग हैं। मिथक, परंपरागत कथाएं, रूढ़ियां और विश्वास आदि पवित्र टोटम, उसकी शक्ति, गुणों तथा लौकिक जगत के साथ उसके संबंध. को निरूपित करते हैं। पवित्र तथा लौकिक एक दूसरे से एकदम भिन्न हैं और उनकी विभाजन सीमा स्पष्ट रूप से निर्धारित है। दुर्खाइम (1964 : 38) के

अनुसार लौकिक तथा पवित्र के बीच पूर्ण विभेद है। ये दोनों जगत एक-दूसरे से अलग ही नहीं, परस्पर विरोधी भी हैं।

दुर्खाइम का तर्क है कि पवित्र और लौकिक का इस प्रकार का विभाजन सभी धर्मो में विद्यमान है।

यह पहले बताया जा चुका है कि कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में ही लौकिक जगत की वस्तुएं कुछ धार्मिक अनुष्ठान करके व्यक्ति को पवित्र तक पहुंचा सकती हैं। ये अनुष्ठान विश्वासों से उपजते हैं। दूसरे शब्दों में, विश्वास और धार्मिक अनुष्ठान वे दो मूलभूत श्रेणियां हैं जिनमें धर्म विशेष संगठित होता है। विश्वासों तथा धार्मिक अनुष्ठानों के रूप में इस प्रकार के दोहरे संगठन का विशेष महत्व इसलिए है क्योंकि इसमें धर्म के प्रकार्य स्पष्ट होते हैं।

आइए अब हम यह जानने का प्रयास करें कि पवित्र का अर्थ क्या है। पवित्र उसे कहते हैं जो प्रशंसनीय, सम्माननीय तथा पूजनीय हो। इस पवित्रता का सर्जक कौन है ? जो समाज की पवित्रता को जन्म देता है और उसे लौकिक से अलग रखता है। दूसरे शब्दों में, मनुष्यों द्वारा किए जाने वाले कुछ अनुष्ठानों से ही देवताओं की उत्पत्ति होती है। यही नहीं, संभव है कि जो कुछ आज पवित्र माना जाता है, वह कल वैसा न रहे। यह भी तथ्य है कि आवश्यक सावधानियों के बिना यदि लौकिक से पवित्र की ओर जाने लगे तो पवित्र की अपनी गरिमा समाप्त हो जाती है।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि पवित्र, समाज की अपनी उपज है। इस प्रकार पवित्र की पूजा करके समाज वास्तव में अपनी ही पूजा करता है। जब कोई समुदाय एक साथ सामूहिक रूप से कुछ अनुष्ठानों को सम्पन्न करता है तो उसमें सामूहिकता का भाव विकसित होता है। इन सामूहिक भावों का प्रतीक होती है पवित्र वस्तु, जिसे समाज अन्य वस्तुओं से पृथक मानता है और पूजता है। अनुष्ठान से जुड़े कुछ विशिष्ट नियम तथा आदर्श समाज को दिशा देते हैं और उसे नैतिक समुदाय में रूपातंरित करते हैं।

दुर्खाइम (1964 : 16) के अनुसार सामूहिक प्रतिनिधित्व (collective representation) तभी होता है जब समुदाय में घनिष्ठ सहयोग हो। सामूहिक प्रतिनिधित्व तभी उभरते हैं जब समूचा समुदाय पवित्र के प्रति अपनी प्रतिक्रिया के रूप में कुछ धार्मिक अनुष्ठान करने के लिए एकत्र होता है। ये अनुष्ठान दो प्रकार के होते हैं- सकारात्मक और नकारात्मक। नकारात्मक अनुष्ठानों में वे सभी निषेध शामिल हैं जिनका पालन सामूहिक भाव पैदा करने तथा पवित्र की पूजा करने के लिए किया जाता है। दूसरी ओर सकारात्मक अनुष्ठान व्यक्ति द्वारा पवित्र की ओर जाने तथा समाज में शामिल होने से पहले सावधानीपूर्वक की जाने वाली ''तैयारियों'' के प्रतीक हैं। उदाहरण के लिए, सयाने होने पर कई समाजों में युवाओं का दीक्षा संस्कार होता है जो उनके वयस्क हो जाने को दिखाता है। दीक्षा संस्कार के कुछ अनुष्ठान बहत कष्टपूर्ण होते हैं, किन्तु कष्ट के माध्यम से ही व्यक्ति विशेष का रचनांतरण होता है और एक सामाजिक दशा से दूसरी दशा में इस तरह लौकिक अवस्था से पवित्र अवस्था की ओर उसका गमन होता है।

1.5 धर्म और जादू-टोना (Religion and Magic)

धर्म और जादू-टोने के बीच बहुत सी समानताएं हैं क्योंकि दोनों का अदृष्य शक्तियों से संबंध है। विश्वास रखने वालों की आस्था पर इन दोनों का अस्तित्व आधारित है। मनुष्य के जीवन में भय, कुंठा और दिन-प्रतिदिन के उतार-चढ़ाव से उबरने के संदर्भ में धर्म और जादू-टोने को समझा जा सकता है। धर्म और जादू दोनों में ही उद्देश्य विशेष की पूर्ति के

लिये अलौकिक शक्ति को कई विधियों द्वारा वष में करने का प्रयास किया जाता है। मैलिनॉस्की और फ्रेजर ऐसे दो विद्वान हैं जिनका धर्म और जादू-टोना को समझने में बहुत योगदान है।

इन विद्वानों के अनुसार धर्म का संबंध मनुष्य की आधारभूत समस्याओं और मानव अस्तित्व के (अर्थ जैसे मृत्यु, विफलताएं आदि से है)।, जबकि जादू-टोने का संबंध उसकी छोटी-मोटी समस्याओं जैसे मौसम के परिवर्तन, अकाल, युद्ध में विजय, रोगों की रोकथाम आदि से है। धर्म में एक ओर लोग जहां ईश्वर की पूजा अर्चना करते है। वहीं जादू-टोना में जादूगर अलौकिक शक्ति को वष मे करने की कोशिश करता है। धर्म में लोग अलौकिक शक्ति के प्रति अपना विश्वास दिखाते हैं और उसके विपरीत जादू-टोने में जादू करने वाले अलौकिक शक्ति को वश में करने के लिए अपनी शक्ति पर विश्वास करते हैं। यहाँ बताना आवश्यक होगा कि धर्म और जादू-टोना पूरी तरह से अलग नहीं हैं।

वर्मोन (1962:63) का कहना है कि जादू-टोना एक प्रकार से ग्राहक-विक्रेता जैसी स्थिति में किया जाता है जबकि धर्म में मालिक और चाकर की भावना होती है अर्थात भक्त भगवान की शरण में होता है। धर्म में मनुष्य परमात्मा के समक्ष स्वयं को तुच्छ और शक्तिहीन पाता है और उस परम शक्ति को सर्वशक्तिमान मानता है। उपासक अपने परमात्मा से प्रार्थना और याचना करता है। वस्तुतः धर्म अपने आस्था वालों से एक प्रबल भावात्मक संबंध की अपेक्षा रखता है जो कि पूर्ण रूप से व्यक्तिगत होता है। जबकि जादू-टोने में जादूगर एक प्रकार का व्यापारी होता है और वह अपनी शक्ति से लौकिक शक्ति द्वारा काम करवाने की कीमत पाता है। जादुई कार्य औपचारिक रूप से किया जाता है और एक पूर्व निश्चित नियम या विधि का पालन करता है। जबकि धर्म एक सामूहिक गतिविधि है। धर्म में अनुयायियों का एक निश्चित ध्येय या लक्ष्य रहता है, उसके अपने विश्वासों का पुंज होता है और सर्वमान्य सामूहिक आचार होता है। एक धर्म के अनुयायियों का एक धार्मिक समुदाय बनता है। सीधी-सीधी तुलना करें तो स्पष्ट हो जाएगा कि. जादू-टोने से आस्थावानों में किसी प्रकार की सामुदायिक भावना नहीं पैदा होती। जादू-टोना अधिकतर वैयक्तिक स्तर पर किया जाता है। धर्म की तरह जादू-टोना न तो किसी प्रकार का दर्शन होता है, न कोई जीवन पद्धति, न कोई नैतिक संहिता। जादू-टोने में जादूगर स्वयं अपने कौशल को काम में लाता है व इस तरह जादू में उसकी ही मान्यता होती है। जबकि धार्मिक कार्य सम्पन्न कराने वाले उस धर्म में आस्था रखने वाले समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं। जाने माने नृशास्त्री फ्रेजर के अनुसार जादू-टोने के व्यावसायिक रूप और जादुई नुस्खों पर आधारित आस्था को दृष्टि में रखकर जादू को विज्ञान का आदिम रूप कहा जा सकता है।

1.6 धर्म और विज्ञान (Religion and Science)

विज्ञान का अर्थ है ज्ञान की खोज और समस्याओं के समाधान की एक पद्धति । धर्म और विज्ञान, दोनों ही मानवीय बोध के तरीके हैं अतः ये दोनों ही मनुष्य को तथ्य या वास्तविकता से जोड़ने के तरीके हैं। धर्म और विज्ञान उस अज्ञात को ज्ञेय बनाने या उजागर करने का प्रयास करते हैं। यद्यपि विज्ञान की अपेक्षा धर्म का रूप अधिक सामूहिक है। विज्ञान भी वैज्ञानिक समुदाय में मिलजुल कर आपसी सहयोग से काम करने पर ज़ोर देता है। धर्म और विज्ञान दोनों ही स्वयं को सत्य के करीब मानते हैं। फिर भी विगत और वर्तमान में हो रहे युद्धों में धर्म और विज्ञान दोनों ही मनुष्य जाति के विरूद्ध क्रियाशील हो गए हैं। धर्म और विज्ञान दोनों में काम कर रहे लोगों के लिये दोनों ही विशेष योग्यताएं नियत करते हैं।

विज्ञान ज़ोर देता है कि केवल दिखने मात्र से ही किसी तथ्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। वैज्ञानिक पद्धति में केवल प्रयोग के बाद ही तथ्य विशेष का अर्थ-मूल्य जाना जा सकता है। समय, स्थान, व्यक्ति, उपकरण आदि जो तत्व प्रयोगों के परिणामों पर प्रभाव डाल सकते है। प्रयोगशाला में उन सारे तत्वों को नियंत्रण में रखा जाता है। विज्ञान धर्म से भिन्न है क्योंकि विज्ञान में निष्पक्षता व तटस्थता से परे आस्था की जाती है। वैज्ञानिक पद्धति में पूर्वाग्रहों को मान्यता नहीं मिलती है। विज्ञान में सूक्ष्मता (precision) तथा परिमाणन (measurement) पर ज़ोर दिया जाता है जो कि धर्म के संदर्भ में संभव नहीं है। विज्ञान अज्ञात वस्तु को प्रेक्षणीय वास्तविकता के स्तर पर लाता है। किन्तु धर्म ईश्वरीय अभिव्यक्ति का रूबरू साक्षात्कार नहीं करवा सकता। वैज्ञानिक ज्ञान तकनीकों के द्वारा प्रकृति में ठोस परिवर्तन कर सकता है, किन्तु धर्म इस प्रकार का कोई ठोस और तुरंत परिणाम नहीं दिखा सकता। वैज्ञानिक ज्ञान तथा पद्धति विश्वव्यापी रूप से मान्य है किन्तु धार्मिक जीवन के सिद्धांत एक समाज से दूसरे समाज में भिन्न हैं।

1.7 सारांश

इस इकाई में हमने धर्म के समाजशास्त्र के अर्थ को समझाया। सर्वप्रथम हमने बताया कि धर्म एक सामाजिक प्रक्रिया है क्योंकि यह सामूहिक विश्वासों और आचारों की प्रणाली है। धार्मिक अनुभूति सामाजिक अनुभूति है। ऐसा केवल इसलिए नहीं है कि वह एक समूह द्वारा अनुभव की जाती है अपितु इसके अंतर्गत धार्मिक विश्वास और आचार एक संपूर्ण संस्कृति के एक भाग के रूप मे सीखे जाते हैं।

हमने धर्म की समाजशास्त्रीय विशेषताओं को स्पष्ट किया और उनकी व्याख्या की। धर्म एक सामाजिक तथ्य है जो सामूहिक विश्वासों और आचारों की प्रणाली है। धर्म एक प्रकार की नैतिक संहिता देता है और धर्म में मुख्य रूप से पवित्रता और पारलौकिकता का संदेश होता है।

अंत में, हमने धर्म, जादू-टोना और विज्ञान के बीच संबंध स्थापित किया और उनमें अंतर भी स्पष्ट किया। जादू-टोने के विपरीत धर्म अपेक्षाकृत अधिक सामूहिके और पारलौकिक तथ्य है, जबकि जादू-टोना अधिक वैयक्तिक और इहलौकिक है। हमने यह भी बताया कि धर्म और विज्ञान दोनों ही वास्तविकता को समझने के दो तरीके हैं, यद्यपि दोनों की पद्धति एक-दूसरे से अलग है।

1.8 संदर्भ

ओ डिया, थामस एफ (1966) *द शोशियोलोजी ऑफ रिलिजन,* प्रेंटिस हॉल, नई दिल्ली

रॉबर्टसन, रॉलैड (1970) द शोशियोलोजिकल इंटरप्रटेशन ऑफ रिलिजन, बेसिल, ब्लेकवैल, ऑक्सफोर्ड

येंगर, जे.मिल्टन (1957) *रिलिजन सोसाइटी एंड द इंडविजुअल,* मैकमिलन, न्यू यार्क

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री, *समाज का अध्ययन,* (ESO 11), नई दिल्ली, इग्नू

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री, *धर्म और समाज,* (ESO 15), नई दिल्ली, इग्नू

1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) विश्वास मस्तिष्क की एक स्थिति या भाव है। इस स्थिति में व्यक्ति किसी व्यक्ति या वस्तु के होने में आस्था या भरोसा रखता है। यह विचार या धारणा की प्रणाली है, जबकि अनुष्ठान, क्रिया की प्रणाली है। अनुष्ठान निश्चित स्वरूप वाले कार्य हैं जिनका उद्देश्य मानवीय गतिविधियों को नियंत्रित करना है।

ii) अनुष्ठान आमतौर पर धार्मिक मिथकों और ब्रह्मांड के स्वरूप के प्रमुख पक्षों को प्रदर्शित करते हैं।

बोध प्रश्न 2

i) अलौकिक शक्ति मनुष्य की इंद्रियों से परे मानी जाती है। उसे असामान्य, अनंत और सर्वव्यापी माना जाता है।

ii) जब कभी मनुष्य ईश्वर से संबंध स्थापित करना चाहे तो इसके लिए कुछ पूर्वनिर्धारित आचरण होते हैं। इसी से मनुष्य के बीच यह करे, न करे की नैतिक संहिता का उदय होता है।

iii) धर्म की समाजशास्त्रीय विशेषताएँ हैं :

क) धर्म एक सामाजिक तथ्य है

ख) यह सामूहिक विश्वासों और आचारों की प्रणाली है

ग) धर्म का केन्द्र बिन्दु है ''अलौकिक'' या ''पवित्र'' तत्व ।

घ) धर्म नैतिक संहिता प्रदान करता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 2 आत्म संयम और संचयन : धर्म, आर्थिकी और शक्ति*

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 धर्म, आर्थिकी और शक्ति के अर्थ तथा उनके परस्पर संबंध

- 2.2.1 धर्म
- 2.2.2 आर्थिकी
- 2.2.3 शक्ति
- 2.2.4 धार्मिक नैतिकता तथा आर्थिकी की बीच परस्पर संबंध

2.3 प्रोटेस्टेंट नैतिकता तथा पूंजीवाद की प्रवृत्ति

- 2.3.1 पूंजीवाद की प्रवृत्ति
- 2.3.2 प्रोटेस्टेंट नैतिकताः पूंजीवाद के विकास को प्रभावित करने वाली विशेषताएँ
- 2.3.3 कल्विनवाद की मुख्य विशेषताएं
- 2.3.4 कल्विन धर्म को मानने वालों के विश्वास

2.4 सारांश

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.7 संदर्भ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपके लिए संभव होगा :

- धर्म तथा आर्थिकी के अर्थ तथा उनके परस्पर संबंधों का विवेचन करना
- वेबर द्वारा चर्चित आधुनिक पूंजीवाद के विकास पर प्रोटेस्टेंट नैतिकता के प्रभावों की व्याख्या करना
- धर्म, आर्थिकी और शक्ति पर मैक्स वेबर के अध्ययनों का मूल्यांकन करना।

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई के आरंभ में धर्म, आर्थिकी और शक्ति शब्दों के अर्थ स्पष्ट होंगे। फिर आपको धार्मिक विश्वासों, और आर्थिक क्रियाकलाप के बीच पारस्परिक संबंधों की जांच का अवसर मिलेगा। इनके बीच परस्पर संबंधों को स्पष्ट करने के लिए मैक्स वेबर की प्रसिद्ध पुस्तक *द प्रोटेस्टेंट एथिक एंड द स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म* में दिए गए प्रमुख तर्क का विवेचन किया गया है।

आपको यह स्पष्ट होगा कि पूंजीवाद की प्रवृत्ति से वेबर का क्या अभिपाय था और यह परंपरावाद से कैसे भिन्न थी। इसके बाद ''प्रोटेस्टेंट नैतिकता के कुछ पहलुओं पर चर्चा होगी, वेबर के अनुसार प्रोटेस्टेंट नैतिकता ने पश्चिमी दुनिया में पूंजीवाद के विकास में काफी योगदान किया था।

*इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृत : इकाई 15 और 16 *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO-13) और मिचेल कैनेडी द्वारा रचित इकाई 10 *समाज और धर्म* (ESO-15) का नीता माथुर द्वारा संशोधन।

प्रत्येक युग की अपनी विशिष्ट अर्थव्यवस्था होती है। सामंतवाद, पूँजीवाद और साम्यवाद इसके कई उदाहरण हैं। उत्पादन, वितरण और उपभोग का स्वरूप और संगठन विविध आर्थिक व्यवस्थाओं में एक-दूसरे से काफी भिन्न होते हैं। 15वीं और 16वीं शताब्दियों में यूरोप में विज्ञान, दर्शन एवं पुनर्जागरण (Renaissance) के प्रभाव से सामंतवाद का पतन हो रहा था। अनेक सामंतवादी देशों में कैथोलिक चर्च की मजबूत जड़े थीं। सामंतवाद के परिवर्तन के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी परिवर्तन आने लगा। कैथोलिक चर्च के ध र्मसिद्धांतों को नई विचारधाराओं ने चुनौती दी। 'पोप' का आधिपत्य और राष्ट्र के कार्य में चर्च का दखल विशेष रूप से कड़ी आलोचना का पात्र बने। पूंजीवाद के विकास के साथ विभिन्न यूरोपीय देशा में अनेक प्रोटेस्टेंट पंथों का उदय हुआ। बहुत से विद्वानों ने पूंजीवाद और धर्म के संबंध आर विशेषरूप से प्रोटेस्टेंटवाद को समझने का प्रयास किया।

2.2 धर्म, आर्थिकी और शक्ति के अर्थ तथा उनके परस्पर संबंध

इस भाग में आप धर्म तथा आर्थिकी के अर्थ की संक्षेप में चर्चा को पढ़िये। इन दोनों शब्दों के अर्थ जानने के बाद आप अगले भाग में धर्म तथा आर्थिकी के बीच संबंध के बारे में वेबर द्वारा प्रतिपादित प्रारंभिक विचारों का विवेचन करें।

2.2.1 धर्म

धर्म शब्द से तात्पर्य "अलौकिक शक्तियों के बारे में विचारों तथा विश्वासों के एक समुच्चय तथा उसे मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव से है। मानव के समक्ष हमेशा से कुछ ऐसी समस्याएँ और संकट आते रहे हैं जिनका कोई तार्किक समाधान नहीं किया जा सका है।

ऐसा क्यों होता है कि जो हमें प्रिय होते हैं उनकी मृत्यु हो जाती है? ऐसा क्यों होता है कि एक अच्छा व्यक्ति तकलीफ उठाता है और बुरा व्यक्ति फलता-फूलता है? प्राकृतिक आपदाएं क्यों आती हैं? इन कठिन प्रश्नों का समाधान उन धार्मिक विश्वासों में मिलता है जो इसका "अलौकिक" या "दैवी" उत्तर प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए मानव जीवन के दुःखों का कारण यह बताया जाता है कि यह मनुष्य के विश्वास की परीक्षा करने का ''दैवी ढंग" होता है या फिर ये पूर्व जन्म के पापों का दंड होता है। धार्मिक विश्वास जीवन को एक अर्थ प्रदान करते हैं। ये लोगों को उनके तथा उस दुनिया के अस्तित्व के बारे में जिज्ञासाओं का समाधान देते हैं, जिसमें उनका जीवन बीतता है ये विश्वास लोगों के लिए आचार व्यवहार के नियमित निर्देश व्यस्थित करते हैं जिन पर चलने की उनसे अपेक्षा की जाती है।

2.2.2 आर्थिकी

आर्थिकी से क्या तात्पर्य है? समाज के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए कुछ बुनियादी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति होना जरूरी होता है। खाना, कपड़ा और आवास जीवन की अनिवार्य जरूरतें हैं। आर्थिकी या अर्थव्यवस्था का संबंध हमारे समाज द्वारा बनाई गई वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन, उपभोग तथा वितरण से संबंधित प्रबंधों से होता है।

क्या उत्पादित किया जाना है? कितना उत्पादित किया जाना है? जरूरतमंदों को वस्तुएं किस प्रकार उपलब्ध कराई जाएं? काम का विभाजन कैसे किया जाए? ये कुछ अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण मुद्दे हैं।

बॉक्स 2.1 धर्म एवं अर्थव्यवस्था (Religion and Economy)

सामान्यतः अर्थशास्त्र वस्तुओं के उत्पादन और वितरण से संबद्ध है। मनुष्य उत्पादन और वितरण की प्रक्रियाओं से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं। किन वस्तुओं का उत्पादन और वितरण होगा, यह समाज की खपत विशेषताओं के सामान्य प्रारूप पर निर्भर करता है। पिछले भाग में हमने कहा कि धर्म हमारी कथनी और करनी को प्रभावित करता है। स्वाभाविक है कि धार्मिक मान्यताएँ और मूल्य काम धंधे और उपभोग के प्रति भी मानव व्यवहार पर असर डालते हैं।

जिस धर्म में मनुष्य की मुक्ति का मार्ग कठोर परिश्रम माना गया है, उसके अनुयायी निश्चित रूप से समर्पित और ईमानदार श्रमिक होंगे। दूसरी ओर, यदि किसी धर्म में काम को पापों की सजा के रूप में देखा गया हो तब तो उसमें समर्पित और ईमानदार श्रमिक मिलने से रहे। इस बात को एक अलग तरह से देखें । यदि किसी धर्म में काम के प्रति ईमानदारी और लगन पर बहुत ज़ोर हो तो अनुयायी कारखानों में श्रमिको के शोषण को नजरंदाज भी कर सकते हैं।

धार्मिक मान्यताएँ उपभोग को भी प्रभावित करती है। यदि किसी समाज में मद्यपान निषिद्ध हो तो शराब के कारखानों को बंद कर दिया जायेगा। इसलिए यह कहना सही है कि धर्म मनुष्य की आर्थिक गतिविधियों को प्रभावित करता है। अक्सर यह भी देखा गया है कि आर्थिक उत्पन्न होता है। भारत की अनेक जनजातियों में भूमि हस्तान्तरण और गरीबी के कारण नये धार्मिक पंथों का उदय हुआ है। नये 'मसीह' या पैगम्बरों ने नये पंथों के माध्यम से संकट का समाधान दिया। अभी तक यही दर्शाया गया कि धार्मिक मान्यताएँ और मूल्य उत्पादन, वितरण और उपभोग को प्रभावित करते हैं।

2.2.3 शक्ति

सामान्य प्रयोग में ''शक्ति'' शब्द का अर्थ है ताकत अथवा नियंत्रण की क्षमता। समाजशास्त्रियों ने इसकी परिभाषा एक व्यक्ति अथवा समूह की अपनी इच्छा पूर्ण करने तथा अपने निर्णयों एवं विचारों को कार्यान्वित करने के सामार्थ्य के रूप में की है। इसमें दूसरों की इच्छा के विपरीत भी उन्हें प्रभावित करने अथवा उनके आचरण को नियंत्रित करने की क्षमता निहित है।

मैक्स वेबर के अनुसार, शक्ति सामाजिक संबंधों का एक पहलू है। इसका संबंध एक व्यक्ति द्वारा दूसरे के आचरण पर अपनी इच्छा थोपने की संभावना से है। शक्ति का अस्तित्व सामाजिक अन्तक्रियाओं में है और यह असमानता की स्थितियां पैदा करती है क्योंकि जिसके हाथ में शक्ति है उसमें इसे दूसरों पर थोपने की प्रवृत्ति होती है। शक्ति का प्रभाव अलग-अलग स्थिति में अलग-अलग होता है। एक ओर यह प्रभाव शक्तिशाली व्यक्ति की क्षमता पर निर्भर करता है।

वेबर की मान्यता है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में शक्ति का प्रयोग संभव है।

यह युद्ध क्षेत्र अथवा राजनीति तक ही सीमित नहीं है। इसे बाजार, भाषण मंच तथा किसी सामाजिक समारोह, खेल-कूद, वैज्ञानिक गोष्ठियों और यहां तक कि परोपकार की गतिविधियों में भी देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए दान अथवा भिक्षा देना अपनी आर्थिक शक्ति प्रदर्शित करने का एक छोटा सा तरीका है। एक अमीर व्यक्ति अपनी आर्थिक

शक्ति द्वारा भिखारी को कुछ देकर उसे खुश कर सकता है और इंकार करके उसे निराश भी कर सकता है।

शक्ति के स्रोत क्या हैं? वेबर ने शक्ति के दो परस्पर-विरोधी स्रोतों का उल्लेख किया है। ये नीचे दिए प्रकार से है।

क) वह शक्ति जो धन-अर्थव्यवस्था के अंतर्गत औपचारिक मुक्त बाजार में पनपने वाले हितों के मेल से प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए चीनी उत्पादकों का एक समूह अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के लिए अपने उत्पादन की आपूर्ति को नियंत्रित करे।

ख) सत्ता की एक सीमित प्रणाली, जो आदेश देने के अधिकार तथा उसके पालन के कर्तव्य का निर्धारण करती है। उदाहरण के लिए सेना में एक जवान अपने अधिकारी का आदेश मानने को बाध्य है। अधिकारी को आदेश देने की शक्ति सदैव सत्ता की सीमित प्रणाली से मिलती है।

जैसा कि आपने दूसरे विषय में देखा, शक्ति की चर्चा करते हमें उसकी वैधता पर विचार करना पड़ता है। वेबर के अनुसार, यही वैधता सत्ता का मूल पक्ष है। आइए अब हम सत्ता की अवधारणा पर विचार करें।

सत्ता के लिए वेबर द्वारा प्रयुक्त जर्मन शब्द ''हैरशाफ्ट'' (herrschaft) का अनुवाद कई रूपों में हुआ है। कुछ समाजशास्त्रियों ने इसे सत्ता (authority) कहा है, जबकि कुछ विद्वानों ने इसका अनुवाद ''प्रभुत्व'' (domination) अथवा ''आदेश" (command) किया है। "हैरशाफ्ट'' का अर्थ है ऐसी स्थिति जिसमें ''हैर'' (herr) अथवा स्वामी अन्यों पर प्रभुत्व जमाता है अथवा हुक्म चलाता है। रेमण्ड आरों (1967: 187) के अनुसार, हैरशाफ्ट की परिभाषा स्वामी की वह क्षमता है जिसमें वह उन लोगों से आज्ञापालन करवाता है जो सैद्धांतिक रूप से उसके प्रति आज्ञाकारी है। इस इकाई में हमने वेबर की ''हैरशाफ्ट'' की अवधारणा को सत्ता (authority) शब्द द्वारा व्यक्त किया हैं।

यह प्रश्न किया जा सकता है कि शक्ति (power) और सत्ता (authority) में क्या अंतर है। जैसा कि आपने पढ़ा, शक्ति का अर्थ है किसी अन्य को नियंत्रित करने की योग्यता अथवा क्षमता। सत्ता से अभिप्राय है, वैध शक्ति। इसका अर्थ है कि स्वामी को समादेश देने का अधिकार है और वह उसके अनुपालन की अपेक्षा कर सकता है।

बॉक्स 2.2 शासन करने का दैवीय आधार

प्राचीन काल में, यह माना जाता था कि राजाओं को देवताओं द्वारा चुना जाता था। इस अर्थ में, उनका शासन करने का आधार दैवीय उत्पत्ति का था। शासक मुख्य धार्मिक अधिकारों या देवताओं और मनुष्यों के बीच मध्यस्थ हो सकते थे। आपको यह जानने में रूचि होगी कि मिस्त्र के एक फैरोह ने सरकार का नेतृत्व किया और पूजा स्थलों के उच्च पुजारी के रूप में सेवा की।

2.2.4 धार्मिक नैतिकता तथा आर्थिकी के बीच परस्पर संबंध

अभी आपने धर्म और आर्थिकी का संक्षेप में तात्पर्य पढा है। ऊपर से देखने में ये दाना एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न लगते हैं। धर्म का संबंध पारलौकिक से है तो आर्थिकी का संबंध कार्य करने, उत्पादन करने और उपभोग करने के व्यावहारिक कार्य-व्यापार से होता ह। एक दूसरे से भिन्न दिखाई देने वाली इन दोनों व्यवस्थाओं के बीच क्या कोई संबंध होता है?

मैक्स वेबर के अनुसार इन दोनों के बीच आपसी संबंध होता है। उसके मतानुसार मानव समाज के विचार, विश्वास, मूल्य तथा विश्व के प्रति दृष्टिकोण ही उनके सदस्यों के कार्यकलापों और यहां तक कि उनके आर्थिक क्षेत्र के कार्यकलापों का दिशा-निर्देश करते हैं। जैसा आपने पहले पढ़ा है, धर्म मनुष्य के आचार-व्यवहार के लिए कुछ दिशा-निर्देश निर्धारित करते हैं। इन दिशा-निर्देशों के अनुसार ही धर्मावलम्बी अपने कार्यकलापों को निदेषित या निरूपित करते हैं। ये दिशा-निर्देश प्रत्येक धार्मिक पद्धति के धार्मिक नैतिक मूल्यों में समाहित होते हैं।

बॉक्स 2.3 नैतिकता (Ethic)

नैतिकता केवल धर्म तक ही सीमित नहीं होती, यहां व्यावसायिक नैतिकता, राजनीतिक नैतिकता तथा इसी प्रकार की अन्य नैतिकता का उल्लेख किया जा सकता है। नैतिकता का सामाजिक संरचना के साथ संबंध होता है, क्योंकि इसका समाज के सदस्यों के सामाजिक आचार-व्यवहार के कुछ ऐसे मानक निर्धारित करती है जो वास्तविक व्यवहार के मूल्यांकन करने या उन्हें जांचने में प्रयुक्त किए जाते हैं। दूसरे शब्दों में नैतिक नियम ''क्या करना चाहिए'' के द्योतक होते हैं। वे उन सामाजिक समूहों के विशेष मूल्यों तथा विश्वासों को प्रकट करते हैं, जिनसे वे निरूपित होते हैं।

आइए, वेबर के विचारों को अपने समाज से एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करें।

यदि कोई स्वास्थ्य विशेषज्ञ यह सुझाव दे कि यदि भारत के लोग गाय का मांस खाने लगें तो भूख तथा कुपोषण की समस्या कम की जा सकती है। किन्तु गौवध का मात्र विचार ही अधिकांश हिंदुओं के लिए घृणा करने योग्य है और इसे पूरी तरह अस्वीकार कर दिया जाएगा। इसलिए गौवध चाहे आर्थिक दृष्टि से तार्किक या युक्तिपूर्ण लगे किन्तु समाज के मूल्य तथा विचार (इस संदर्भ में यह विचार कि गाय को पवित्र माना जाता है) कुछ निर्णयों पर निश्चिततः अपना-प्रभाव डालते हैं। हमारे विश्वास और मूल्य ही हमारे व्यवहार का रूप निर्धारण करते हैं। धार्मिक विश्वासों तथा आर्थिक व्यवहार के बीच इसी संबंध को वेबर ने अपनी कृतियों में उजागर करने की कोशिश की। नैतिकता पर स्पष्टीकरण हेतु बॉक्स 2.4 देखें।

बॉक्स 2.4 पारंपरिक पूंजीवाद तथा तार्किक पूंजीवाद

पारंपरिक पूंजीवाद बहुत से कालों तथा स्थानों में विद्यमान रहा है। इस तरह के व्यापार में पूंजीपति को अनिश्चितता का सामना करना पड़ता है अर्थात् उसको व्यापार में पर्याप्त लाभ की पूरी निश्चितता नहीं होती है। दूसरे शब्दों में कहें कि उसे जोखिम उठाना पड़ता है। विशेष रूप से यह इटली के शहरों में स्पष्ट रूप से विद्यमान था। पारंपरिक पूंजीवाद एक जोखिमी व्यवसाय था, जिसमें दूरस्थ स्थानों से विलासिता की वस्तुओं का आयात करना शामिल होता था। विदेशी रेशम, मसाले, हाथी दांत की वस्तुओं आदि को बढ़ी-चढ़ी कीमतों पर ग्राहकों को बेचा जाता था। इसका उद्देश्य यह होता था कि यथा संभव ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमा लिया नहीं जानता था कि अगला सौदा कब और कहां हो पाएगा। इस तरह यह एक ही झटके में सौदा करने की कड़ी के रूप में होता था। दूसरी ओर तार्किक पूंजीवाद वस्तुओं के बहुत बड़े पैमाने पर उत्पादन और वितरण पर आधारित होता है। औद्योगिक क्रांति तथा कारखाना उत्पादन प्रणाली के कारण ऐसा करना संभव हो गया। ध्यान देने योग्य बात यह है कि तार्किक पूंजीवाद के अंतर्गत केवल कुछ विलासिता की वस्तुओं का ही व्यापार नहीं किया जाता अपितु इसमें रोजमर्रा की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली लगभग सभी वस्तुओं जैसे रोटी (bread) से लेकर कपड़ा और

कार तक का व्यापार किया जाता है। तार्किक पूंजीवाद का लगातार विस्तार हो रहा है, इसमें नई विधियों, नए आविश्कारों, नए उत्पादों तथा नए उपभोक्ता वर्गों का समावेश हो रहा है। व्यवस्थित रूप से कार्य होने और नियमित सौदे होने की वजह से इस प्रकार का पूंजीवाद पारंपरिक पूंजीवाद की तुलना में गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों ही रूपों में भिन्न है।

वेबर के अनुसार प्रोटेस्टेंट धर्म तथा पूंजीवाद के नाम से विख्यात आर्थिक व्यवस्था के बीच कुछ अनुरूपताएं या समानताएं विद्यमान थीं। वेबर ने कहा कि इन्हीं समानताओं ने पश्चिमी जगत में पूंजीवाद के विकास में सहायती थीं।

बोध प्रश्न 1

i) ''धर्म'' से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

ii) धर्म के दो प्रकार्य बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

iii) धार्मिक विश्वास आर्थिक व्यवहार को कैसे प्रभावित करते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2.3 प्रोटेस्टेंट नैतिकता तथा पूंजीवाद की प्रवृत्ति

वेबर ने प्रोटेस्टेंट नैतिकता और पूंजीवाद की प्रवृत्ति के बीच एक सकारात्मक संबंध स्थापित किया है। वेबर के अनुसार पाश्चात्य पूंजीवाद ने जो स्वरूप लिया, वह प्रोटेस्टेंट नैतिकता की व्यवस्था पर आधारित था। वेबर का यह मत था कि प्रोटेस्टेंट नैतिकता का पूंजीवाद की प्रवृत्ति से घनिष्ठ संबंध है। इस संबंध को दर्शाने के लिए वेबर ने प्रोटेस्टेंट नैतिकता की प्रवृत्ति के आदर्श प्ररूप निर्मित किए। आइए, अब हम देखें कि वेबर का पूंजीवाद की प्रवृत्ति से क्या अभिप्राय है।

2.3.1 पूंजीवाद की प्रवृत्ति

लोग काम क्यों करते हैं? हममे से अधिकांश का उत्तर होगा ''पैसा कमाने के लिए।'' धन इसलिए कमाया जाता है कि हम और हमारा परिवार खाना खा सके, कपड़े पहन सके और सिर ढकने के लिए मकान बना सके। धन इसलिए भी कमाया जाता है कि हमें कुछ ऐसी आरामदायक और विलासिता की वस्तुओं का उपभोग उपलब्ध हो ताकि जिंदगी खुशहाल बने।

सम्पत्ति या लाभ अर्जित करने की इच्छा उतनी ही पुरानी है जितना कि मानव जाति का इतिहास। सम्पत्ति हमेशा से ही शक्ति, प्रस्थिति तथा प्रतिष्ठा का प्रतीक मानी जाती रही है। लेकिन मानव इतिहास में पहले कभी भी संपत्ति की इच्छा ऐसा संगठित तथा व्यवस्थित रूप धारण नहीं कर सकी जैसा कि उसने आधुनिक या तार्किक पूंजीवाद में ग्रहण किया है। वेबर इसी तार्किक पूंजीवाद का अध्ययन करना चाहते थे। उन्होंने पूर्वकालिक पारंपरिक या जोखिम भरे पूंजीवाद तथा आधुनिक काल के तार्किक पूंजीवाद के बीच भेद किया (देखिए बॉक्स 2.4)।

वेबर के अनुसार पूंजीपति संपत्ति की इच्छा सुखी या विलासी जिंदगी बिताने के लिए नहीं अपितु उसके माध्यम से और अधिक संपत्ति अर्जित करने के लिए करते थे। धन की खातिर धन अर्जित करने की यह प्रबल इच्छा ही आधुनिक पूंजीवाद का सार-तत्व है। पूंजीवाद एक ऐसी आर्थिक प्रणाली है जिसका लक्ष्य उत्पादन के तर्कपूर्ण संगठन के माध्यम से असीमित लाभ संचित करना होता है।

पूंजीवाद इंग्लैंड तथा जर्मनी जैसे पश्चिमी देशों में उभरा जहां औद्योगिक क्रांति हो चुकी थी। इन देशों में कारखाना प्रणाली के विकास, उत्पादन की नई तकनीकों की खोज, नए-नए औजारों और मशीनों के प्रयोग ने पूंजीपतियों तथा मालिकों को असीम मात्रा में धन कमाना संभव कर दिया। इसके लिए उत्पादन की प्रक्रिया को तार्किक दृष्टि से संगठित किया जाना जरूरी था अर्थात् दूसरे शब्दों में दक्षता तथा अनुशासन लागू करना अनिवार्य था।

श्रमिक एक साध्य का साधन मात्र बन गया और साध्य लाभ हो गया। काम के प्रति अभिवृति यह हो गई कि काम को ठीक तरह से केवल इसलिए नहीं किया जाना है कि व्यक्ति को काम करना ही चाहिए, अपितु इसलिए किया जाना है कि उसके साथ अंतर्भूत पारिश्रमिक जुड़ा है। प्रसिद्ध अमरीकी कहावत कोई भी काम जो करने लायक है वह अच्छी तरह करने लायक होता है इस अभिवृति की परिचायक है। कड़ी मेहनत के साथ तथा दक्षता के साथ काम करना स्वयं में एक साक्ष्य बन गया।

वेबर ने इस कार्य-नैतिकता और परंपरावाद के बीच अंतर को दर्शाया।

परंपरागत समाज में श्रमिक को अधिक वेतन की अपेक्षा कम काम तथा मेहनत की बजाय आराम को अधिक पसंद था। वे नई कार्य-विधियों तथा तकनीकों को अपनाने में अक्षम थे या अनिच्छुक थे।

जैसा पहले कहा जा चुका है, पूंजीवाद में पूंजीपति श्रमिक को साध्य का एक साधन ही मानता है। लेकिन परंपरावाद के अंतर्गत श्रमिक और पूंजीपति के बीच संबंध अनौपचारिक, प्रत्यक्ष और वैयक्तिक थे।

परंपरावाद पूंजीवाद के विकास में बाधक होता है। पूंजीवाद के अंतर्गत व्यक्तिवाद, नए-नए आविश्कार तथा लाभ कमाने की अनथक चेष्टा को अधिक महत्व दिया जाता है। लेकिन

परंपरावाद जैसा कि ऊपर कहा गया है उत्पादन की अपेक्षाकृत कम अनुशासित तथा कम दक्ष प्रणाली पर आधारित होता है। दूसरी ओर, पूंजीवाद की प्रवर्षत्ति एक ऐसी कार्य-नैतिकता पर आधारित होती है जिसका उद्देश्य संपत्ति के लिए पूंजी संचयन करना होता है। ऐसा करने के लिए कार्य को एक दक्षतापूर्ण अनुशासित ढंग से संगठित करना करना होता है। मेहनत के साथ काम करना एक ऐसा गुण होता है जिसके साथ अन्तर्भूत पारिश्रमिक जुड़ा होता है।

परंपरावाद के विपरीत पूंजीवाद की प्रवृत्ति में व्यक्तिवाद अभिनव प्रयोग, मेहनत तथा संपत्ति के लिए ही संपत्ति संचित करने की चाह की जरूरत होती है। इसलिए यह ऐसी आर्थिक नैतिकता है जो पहले की सभी नैतिकताओं से बिल्कुल भिन्न है।

आइए, अब वेबर की ''प्रोटेस्टेंट नैतिकता'' को समझने की चेष्टा करें अर्थात् प्रोटेस्टेंट धर्म के प्रमुख सिद्धांतों या आदर्शों की चर्चा करें। परंतु इसके पहले जरा बोध प्रश्न 2 को पूरा कर लें ताकि अभी तक पढ़े बिंदुओं को दुहराया जा सके।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित तीन प्रश्नों के सही उत्तर पर सही का चिन्ह लगाइये।

i) पूंजीवाद तब पैदा हुआ जब पश्चिमी राष्ट्र निम्नलिखित में से किस घटना से होकर गुजरे?

   क) फ्रांसीसी क्रांति

   ख) हरित क्रांति

   ग) औद्योगिक क्रांति

   घ) उपर्युक्त में कोई नहीं

सही उत्तर बताइए।

ii) उत्पादन के "तार्किक संगठन' के लिए क्या आवश्यक हैं?

   क) दक्षता, अनुशासन तथा कड़ी मेहनत

   ख) श्रमिकों के लिए कम काम और ज्यादा वेतन

   ग) अत्यधिक धनराशि

   घ) उपर्युक्त सभी

iii) निम्नलिखित विशेषताओं को कम 'अ' तथा 'ब' के सही शीर्षक के अंतर्गत लिखिए।

	परंपरावाद	पूंजीवाद
क) मालिक के साथ अनौपचारिक संबंध		
ख) कार्य को साध्य मानकर काम करना		
ग) अभिनव विधियाँ और व्यक्तिवाद		
घ) परिवर्तन का विरोध		

ड) श्रमिक साध्य की पूर्ति के लिए साधन

च) लाभ की असीमित चाह

2.3.2 प्रोटेस्टेंट नैतिकताः पूंजीवाद के विकास को प्रभावित करने वाली विशेषताएं

सबसे पहले आइए कुछ ऐतिहासिक व्यौरों को स्पष्ट करें। प्रोटेस्टेंटवाद क्या है? जैसा कि इसके नाम से मालूम पड़ता है, यह प्रोटेस्ट या विरोध का धर्म है। इसका सोलहवीं सदी में यूरोप में सुधारवाद के काल में प्रादुर्भाव हुआ।

इसके प्रवर्तक मार्टिन लुथर तथा जॉन कल्विन ने कैथोलिक चर्च के साथ संबंध विच्छेद कर लिया। उन्होंने अनुभव किया कि चर्च रूढ़ सिद्धांतों तथा अनुष्ठानों में उलझ गया था और इसका आम आदमी से संपर्क टूट गया था। लालच, भ्रष्टाचार तथा बुराइयों ने चर्च को जकड़ लिया था। पादरी लोग राजाओं जैसी जिंदगी जीने लगे थे। संपूर्ण यूरोप में उभरे प्रोटेस्टेंट पंथों ने चर्च की खोई हुई विचारधारा को पुनः स्थापित करने की चेष्टा की। उन्होंने सादगी, सरलता तथा निष्ठा पर ज़ोर दिया। फ्रांसीसी विद्वान जॉन कल्विन द्वारा सीपित "कल्विनवाद' एक ऐसा ही पंथ था। इंग्लैंड में कल्विन के अनुयायियों को प्यूरिटन (puritan) कहा जाता था। वे उत्तरी अमरीका में चले गए और उन्होंने अमरीकी राष्ट्र की नींव डाली।

वेबर के प्रेक्षण के अनुसार पश्चिम में अधिकांशतः इन प्रोटेस्टेंट मतानुयायियों ने ही शिक्षा तथा रोजगार के क्षेत्र में सबसे ज़्यादा प्रगति की। वे नौकरशाही के उच्चस्थ पदों पर आसीन हो गए। वे सर्वाधिक कुशल तकनीकी कामगार तथा अग्रणी उद्योगपति बने। क्या उनके धर्म में ऐसी कोई बात थी जिससे प्रेरणा लेकर वे इतनी प्रगति कर सके? वेबर का कुछ ऐसा ही विचार था और उसने इसे सिद्ध करने का प्रयास भी किया। जिस प्रकार के पूंजीवाद में वेबर की सबसे ज़्यादा रूचि थी वह कल्विनवाद से ही प्रेरित था। इसकी मुख्य विशेषताओं की जांच करने पर हमें पता चलेगा कि धर्म तथा अर्थव्यवस्था के बीच कितना गहरा संबंध है।

2.3.3 कल्विनवाद की मुख्य विशेषताएं

जैसा कि हमने पहले कहा है, धर्म तथा अर्थव्यवस्था या इस विशेष मामले में पूंजीवाद की प्रवृत्ति तथा कल्विनवाद के बीच संबंध दर्शाने के लिए हमें सबसे पहले कल्विनवाद की मुख्य विशेषताओं का विवेचन करना होगा।

वेबर के अध्ययन के अनुसार, कल्विनवाद में निम्नलिखित विशेषताएं हैं :

i) कल्विन द्वारा प्रतिपादित ईश्वर की छवि

कल्विन के अनुसार ईश्वर सर्वशक्तिमान, परमोत्कृष्ट है। उसकी दैवी इच्छा अज्ञेय होती है। ईश्वर की इच्छा को समझने की चेष्टा करना मनुष्य की मूर्खता होगी।

ii) नियति का सिद्धांत

कल्विनवाद का मूलाधार एक विश्वास है कि ईश्वर ने कुछ लोगों को स्वर्ग में प्रवेश के लिए चुन या निर्वाचित कर रखा है और शेष नरकभोगी होते हैं। चुने हुए लोग स्वर्ग अवश्य पहुंचेंगे फिर चाहे वे पृथ्वी पर कुछ भी करें। शेष जन साधारण स्वर्ग में

स्थान पाने के लिए प्रार्थना या बलि देकर ईश्वर को लुभा नहीं सकते। यह इच्छा अज्ञेय होती है, अतः जनसाधारण के लिए इसे बदल सकना संभव नहीं है। इस कठोर धर्म के अनुयायी को असुरक्षा के बारे में कल्पना करके देखिए। उसे नहीं मालुम कि उसे स्वर्ग के लिए चुना गया या नहीं। उसके लिये सांत्वना तथा सहायता हेतु किसी पादरी के पास जाना भा संभव नहीं, क्योंकि उसे मालूम है कि कोई नश्वर प्राणी ईश्वर को समझ ही नहीं सकता। ऐसी स्थिति में अपने अनिश्चित भाग्य के बारे में अपनी चिंता को वह कैसे दूर कर वह स्वयं को यह कैसे सिद्ध करके दिखाए कि वह चुने हुए कुछ में से एक हैं?

पृथ्वी पर समृद्ध बनकर ही ऐसा कर पाना उसके लिये संभव है। उसकी भौतिक समृद्धि ही उसके चुनाव का प्रतीक या चिन्ह होगी। उसे ईश्वर की स्तुति के लिए कार्य करना है।

iii) कल्विनवाद तथा इहलौकिक आत्म संयम

संयम से हमारा तात्पर्य आत्मानुशासन, नियंत्रण तथा इच्छाओं पर विजय प्राप्त कर लेना होता है। वेबर ने प्रोटेस्टेंटवाद में और विशेष रूप से कल्विनवाद में इहलौकिक आत्म संयम बरतने की प्रवृत्ति पाई। इसके अंतर्गत वातावरण पर नियंत्रण करने के लिए कठोर आत्मानुशासन पर बल दिया गया। सांसारिक या इंद्रिय सुखों को जघन्य माना गया। उनके अनुसार अच्छे कपड़े पहना, नृत्य और संगीत, थियेटर तथा उपन्यास आदि शैतान की उपज है, क्योंकि वे व्यक्ति को ईश्वरीय आराधना के मार्ग से विमुख कर सकते हैं। यहां तक कि हंसने जैसी मानवीय अभिव्यक्ति पर भी अप्रसन्नता प्रकट की गई।

कड़ी मेहनत पर केवल कल्विनवादी ही ज़ोर नहीं, देते थे, अपितु इस पर सभी प्रोटेस्टेंट पंथ भी बल देते थे। ईमानदारी सबसे अच्छी नीति है, यह विचार प्रारंभिक पूंजीवाद का एक सिद्धांत बन गया था। वेबर (1948: 313) ने मैथोडिस्ट पंथ से कुछ उदाहरण दिए हैं, जिनके अनुसार उनके मतावलंबियों के लिए निम्नलिखित काम निषिद्ध बताए गए हैं।

क) किसी वस्तु को बेचते या खरीदते समय मोल भाव करना

ख) आवश्यक कर तथा प्रशुल्क अदा किए बिना वस्तुओं का व्यापार करना

ग) देश के कानून द्वारा अनुमत ब्याज दर से अधिक व्याज वसूल करना

घ) पृथ्वी पर खजाना इकट्ठा करना (अर्थात् निवेश पूंजी को ''निधिक संपत्ति के रूप में परिवर्तित करना)

ङ) ऋण को वापिस करने की क्षमता सुनिश्चित किए बिना उधार लेना

च) सभी प्रकार के भोग विलास

कड़ी मेहनत के फल को सांसारिक सुखों पर खर्च नहीं किया जा सकता। इसलिए धन न केवल एक ही उपयोग है कि और अधिक धन कमाने के लिए उसका फिर से निवेश कर दिया जाए। एक क्षण भी व्यर्थ बरबाद न किया जाए, क्योंकि "कार्य ही साधना'' है और "समय ही धन'' है।

iv) ईश्वरीय आहवान (notion of 'calling')

क्या कोई विश्वविद्यालय का विद्यार्थी सफाई का काम स्वीकार करेगा? शायद नहीं। हममें से अधिकांश लोग सफाई मजदूर या कूड़ा इकट्ठा करने वाले के काम को बहुत छोटा या बहुत गंदा काम मानते हैं। इसके विपरीत कल्विनवाद की नैतिकता यह कहती है कि सभी काम महत्वपूर्ण तथा पवित्र होते हैं। यह केवल काम नहीं होता अपितु एक ईश्वरीय आहवान या एक मिशन होता है और इसलिए इसे निष्ठा तथा लगन के साथ सपन्न करना चाहिए।

सोचिए और करिए 1

किसी भी धार्मिक पंथ के बारे में दो पृष्ठ की टिप्पणी लिखिए जिसमें उस पंथ द्वारा प्रतिपादित व्यक्ति के रोजमर्रा के आचार-व्यवहार के बारे में दिशा-निर्देशों का उल्लेख हो। यदि संभव हो तो अपनी टिप्पणी का अपने अध्ययन केंद्र के अन्य विद्यार्थियों के साथ मिलान कीजिए।

2.3.4 कल्विन धर्म को मानने वालों के विश्वास

अब तक आपने देखा कि वेबर ने विश्व के प्रति अध्यात्मिक दृष्टिकोण और आर्थिक कार्यकलाप की एक निश्चित शैली के बीच घनिष्ठ संबंधों का किस प्रकार वर्णन किया है। यह संबंध कल्विन धर्म के अनुयायियों में विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है। वेबर ने निष्कर्ष के रूप में उनके बारे में निम्नलिखित पांच बातें कही हैं।

क) उनके अनुसार एक परम श्रेष्ठ ईश्वर विद्यमान है जो सृष्टिकर्ता है और उसका शासन है लेकिन वह सीमित मानव मस्तिष्क के लिए अज्ञेय और अगम्य होता है।

ख) इस सर्वशक्तिमान और रहस्यमय ईश्वर ने हम सबकी मोक्ष या नरकवास के लिए नियति तय कर रखी है। इसलिए अपने कर्म से इस देवी आदेश को बदला नहीं जा सकता, क्योंकि यह तो हमारे जन्म से पहले ही तय किया जा चुका होता है।

ग) ईश्वर ने अपने परमानंद के लिए ही इस विश्व की सृष्टि की है।

घ) चाहे उसे मोक्ष मिले या नरकवास, मनुष्य को ईश्वर के आनंद के लिए काम करना ही पड़ेगा और उसे पृथ्वी पर ईश्वर का साम्राज्य सापित करना होगा।

ङ) भौतिक वस्तुएं, मानव प्रकृति तथा हाड़मांस पाप और मृत्यु की व्यवस्था से संबंधित हैं और मोक्ष उसे दैवी कृपा से ही मिल सकता है। (देखिये आरों 1967: 221-222)

इसकी वजह से ही एक अनुशासित तथा निष्ठावान श्रमबल निर्मित करने में सहायता मिली और इसके अभाव में पूंजीवाद का जन्म ही नहीं हो सकता था। कड़ी मेहनत, बचत तथा पुनःनिवेश और समृद्ध बनने की इच्छा का ''पूंजीवाद की प्रवृति के साथ घनिष्ठ संबंध होता है।

आइए अब उस संबंध पर विचार करें, जो वेबर स्थापित करना चाहते थे। विचार मानव आचरण पर हावी होते हैं या प्रभाव डालते हैं और मानव आचरण को उसके पीछे काम कर रहे विचारों के संदर्भ में ही समझा जा सकता है। दिन रात मेहनत करने के बाद भी उस श्रम के फल का उपभोग न करना हममें से कुछ लोगों को अविवेकपूर्ण लग सकता है। लेकिन यदि हम नियति के सिद्धांत और ईश्वर द्वारा चुने जाने को सिद्ध करने के लिए समृद्ध होने की आवश्यकता को ध्यान में रखें तो यह तर्कहीन व्यवहार सार्थक हो जाएगा।

जैसा आपने पहले पढा है कि धार्मिक विश्वास कर्म करने के लिए मार्ग निर्देश तय करते हैं, वे हमें एक विशेष ढंग से आचार करने के लिए प्रेरित करते हैं।

प्राटेस्टेट नैतिकता तथा पूंजीवाद के बारे में उपरोक्त जानकारी के बाद अब बोध प्रश्न 3 पूरा करने का समय आता है, क्यों न यही किया जाये?

बोध प्रश्न 3

i) मैक्स वेबर प्रोटेस्टेंट नैतिकता तथा पूंजीवाद के बीच संबंध क्यों स्थापित करना चाहते थे?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ii) कल्विनवादियों ने कड़ी मेहनत पर ज़ोर क्यों दिया?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

iii) कल्विनवादी किसी भी काम को "छोटा' क्यों नहीं मानते थे?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2.4 सारांश

इस इकाई में सबसे पहले हमने "धर्म और आर्थिकी की अवधारणाओं को स्पष्ट किया। हमने वेबर द्वारा वर्णित इन दोनों अवधारणाओं के बीच संबंध को देखने का प्रयास किया। हमने पश्चिमी देशों में तार्किक पूंजीवाद के विकास के बारे में वेबर द्वारा प्रस्तुत तर्कों का विवेचन किया। अंत में, हमने भारतीय समाज के संदर्भ में वेबर द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत की कुछ आलोचनाओं पर भी विचार किया।

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) धर्म से हमारा आशय अलौकिक या ऐसी घटनाओं के बारे में कुछ विचारों तथा विश्वासों से होता है जिनको स्पष्ट नहीं किया जा सकता। धर्म का संबंध मानव आचरण से संबंधित ऐसे कुछ मूल्यो, विचारों और दिशा-निर्देशों से होता है जो उसे स्वयं को तथा अपने इर्द-गिर्द की दुनिया को समझने में सहायता करते हैं।

ii) क) धर्म मनुष्य को अपने नियंत्रण से बाहर की घटनाओं के साथ मेल रखने में सहायता करता है।

ख) धर्म आचरण के कुछ ऐसे दिशा-निर्देश प्रदान करता है, जो उसके अनुयायियों को उनके कार्यकलापों में निर्देश देकर सहायता करते हैं।

iii) धार्मिक विश्वास ऐसे मूल्य प्रतिपादित करते हैं जिन पर चलने या डटे रहने की अनुयायियों से अपेक्षा की जाती है। इसलिए आर्थिक व्यवहार का रूप समाज की धार्मिक व्यवस्था द्वारा प्रतिपादित मल्यों तथा निर्देशों द्वारा तय किया जाता है।

बोध प्रश्न 2

i) ग)

ii) क)

iii)

परंपरावाद	पूंजीवाद
क)	ख)
घ)	ग)
	ड)
	च)

बोध प्रश्न 3

i) मैक्स वेबर ने देखा कि यूरोप में प्रोटेस्टेंट समुदाय ने ही आर्थिक क्षेत्र में सबसे ज्यादा उन्नति की है। वे उद्योग, शिक्षा तथा नौकरशाही में अग्रणी थे। वेबर ने यह देखने का प्रयत्न किया कि उनकी उन्नति में कहीं उनके धर्म का तो योगदान नहीं था। इसीलिए वेबर ने प्रोटेस्टेंट नैतिकता तथा पूंजीवाद की प्रवृत्ति के बीच संबंध स्थापित करने का प्रयास किया।

ii) कल्विन सिद्धांतों का यह कहना है कि यह व्यक्ति की नियति में होता है कि वह स्वर्ग या नरक में वास करेंगा। कल्विन धर्म के अनुयायियों ने यह सिद्ध करने की कोशिश की कि वे ही पृथ्वी पर समृद्ध बनने के द्वारा स्वर्ग के लिए चुने गए व्यक्ति हैं। समृद्धि प्राप्त करने का एकमात्र उपाय कड़ी मेहनत तथा बचत करना है। इसीलिए उन्होंने कड़ी मेहनत और अनुशासन पर बल दिया

iii) कल्विनवादी कार्य को ईश्वरीय आहवान या एक मिशन मानते थे। कार्य पूर्ण निष्ठा तथा ईमानदारी से किया जाना चाहिए। कार्य के साथ 'अन्तर्भूत पारिश्रमिक होता है, कर्त्तव्य को कर्तव्य के लिए करना चाहिए। कार्य ही उपासना है अतः कोई भी काम छोटा या गंदा नहीं होता।

2.7 संदर्भ

आरों, रेमण्ड, (1967). *मेन करंट्स इन सोसियोलॉजिकल थॉट वाल्यूम* 2, लंदनः पेंगुइन बुक्सः लंदन पष्ठ 210-237

हरलम्बोस, एम., (1980). *सोशियोलॉजी थीम्स एण्ड पर्सपैक्टिव्स.* लंदनः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः लंदन

कसलर, डर्क (1988). *एन इंट्रोडक्शन टु हिज लाइफ एण्ड वर्क,* फिलिप्पा हर्ड द्वारा अनुवादित. शिकागो युनीवर्सिटी प्रैसः शिकागो

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री (2005), *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त,* (ESO-13), नई दिल्लीः इग्नू।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री (2005), *समाज और धर्म* (ESO-15), नई दिल्ली : इग्नू

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 3 तर्कसंगतिः धर्म और राजनीति/राज्य*

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 तर्कसंगति, धर्म और राजनीति का अर्थ

- 3.2.1 तर्कसंगति का अर्थ
- 3.2.2 धर्म का अर्थ
- 3.2.3 धर्म का सामाजिक महत्व
- 3.2.4 राजनीति का अर्थ

3.3 राज्य और धर्मनिरपेक्षीकरण

- 3.3.1 राज्य की अवधारणा
- 3.3.2 धर्मनिरपेक्षीकरण
- 3.3.3 धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया

3.4 राजनीति की प्रकृति

3.5 राजनीति में धर्म

- 3.5.1 एकरूपता/अनेकरूपता
- 3.5.2 धार्मिक समूह और समाज के अन्य विभाजन
- 3.5.3 धर्म/धर्मों की प्रकृति
- 3.5.4 ऐतिहासिक प्रक्रिया

3.6 धर्म और राजनीति/राज्य : एक सामान्य समीक्षा

3.7 सारांश

3.8 संदर्भ

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप;

- तर्कसंगति धर्म और राजनीति का अर्थ समझ सकेंगे;
- यह जान सकेंगे कि धर्मनिरपेक्ष राज्य का उदय किस प्रकार हुआ;
- राजनीति की प्रकृति का वर्णन और विश्लेषण कर सकेंगे; और
- धर्म और राजनीति के बीच के संबंध को प्रभावित करने वाले कारकों पर चर्चा कर सकेंगे।

*इग्नू पाठ्यसामग्री : *समाज और धर्म* (ESO 15) की एस.एन झा द्वारा रचित इकाई 11 से अनुकूलित; खंड 3.2.1 इग्नू पाठ्यसामग्री : *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO 13) की इकाई 17 से अंगीकृतः नीता माथुर द्वारा लघु संशोधन

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने धर्म और अर्थव्यवस्था के अंर्तःसंबंधों पर चर्चा की। इस अंतःसंबंध को स्पष्ट करने के लिए हम पहले आप को धर्म और राजनीति के बारे में बताएंगे। फिर हम राज्य की अवधारणा और धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रकिया की चर्चा करेंगे जिसने मौजूदा भारत की प्रकृति को आकार दिया।

इसके बाद हम राजनीति की प्रकृति आर धर्म और राजनीति के बीच के संबंध को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों की चर्चा करेंगे।

3.2 तर्कसंगति, धर्म और राजनीति का अर्थ (Understanding Rationality Religion and Politics)

इस भाग में हम तर्कसंगति धर्म और राजनीति के अर्थ को समझने का प्रयास करेंगे। इस प्रक्रिया में यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि धर्म और राजनीति केवल धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्र तक सीमित नहीं हैं।

3.2.1 तर्कसंगति का अर्थ

''तर्कसंगति का मतलब ऐसे विचारों और व्यवहारों से है जो तर्क की दृष्टि से संगत और अनुरूप है और जिनकी अनुभव के आधार पर जांच की जा सकती है। तर्कसंगति की प्रक्रिया का अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा जीवन के विभिन्न पक्षों और गतिविधियों में तर्कसंगति का प्रयोग किया जाता है। तर्कसंगति मानव का विशिष्ट अभिलक्षण है। इस विश्वास ने दो सौ से भी अधिक वर्षों से तर्कसंगति को पाश्चात्य दर्शन का मूल विषय बना दिया है (मिचेल 1968: 142)।

वेबर के अनुसार तर्कसंगति आधुनिक युग की विशेषता है। मैक्स वेबर का यह भी विश्वास है कि आधुनिक समाज को समझने के लिए हमें इसके तर्कसंगत अभिलक्षणों और तर्कसंगत शक्तियों को समझना होगा। उसके अनुसार आधुनिक पाश्चात्य जगत की विशेषता तर्कसंगति ही है। इसके कारण मानव गतिविधियों में विधिवत गणना, परिमाण-निर्धारण, पूर्वानुमान और नियमितता का महत्व बढ़ गया है। अब लोग अलौकिक शक्तियों पर विश्वास करने के बजाय तर्क, विवेक और परिकलन में अधिक विश्वास करते हैं। वेबर के मत में तर्कसंगति प्रक्रिया का अभिप्राय यह है कि सैद्धांतिक रूप से ऐसी किसी प्रकार की रहस्यमय अनिश्चित शक्तियां नहीं हैं जिनसे हमें अपने कार्य में किसी प्रकार की सहायता मिलती है बल्कि सिद्धांततः सभी चीजों को परिकलन द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। प्राचीन काल के लोगों की तरह हमें भूतप्रेत आदि को बस में करने के लिए रहस्यमयी जादुई शक्तियों की जरूरत नहीं है (वेबर 1946: 139; हर्न 1985: 76)। आइए, हम एक उदाहरण द्वारा समझें। अगर किसी को अच्छी फसल लेना हो तो वह या तो अपना समय, प्रार्थना आदि में नष्ट करे अथवा व अपनी शक्ति और धन का उपयोग सिंचाई के लिए नहरों की खुदाई में अथवा ट्यूबवैल लगाने में करके अच्छी फसल प्राप्त करे। इनमें पहली स्थिति में वह रहस्यमयी अनिश्चित शक्तियों पर निर्भर है और दूसरी स्थिति में उसने तर्कसंगत परिकलन का सहारा लिया है।

वेबर के मत में तर्कसंगतिकरण पाश्चात्य संस्कृति की वैज्ञानिक विशेषज्ञता और प्रौद्योगिक विभेदीकरण का परिणाम है। उन्होंने इस प्रक्रिया की व्याख्या करते हुए कहा कि तर्कसंगतिकरण का अभिप्राय पूर्णता के लिए प्रयास करना है ताकि जीवन के व्यवहार में पूर्ण परिष्कार हो

सके और बाह्य जगत पर नियंत्रण स्थापित हो सके (देखिए फ्राएंड 1972: 18)। अपने विश्वासों को रहस्यमुक्त करना और विचारों को लौकिक बनाना. ये दोनों तर्क संगति की प्रक्रिया के महत्वपूर्ण पहलू हैं। इनकी मदद से मनुष्य का संसार पर प्रभत्व हो सकता है। इस प्रक्रिया से कानूनों और संगठनों को उचित रूप प्रदान किया जा सकता है।

जैसा कि इससे पहले उल्लेख किया जा चुका है वेबर की रचनाओं में तर्कसंगति की अवधारणा का बार-बार उल्लेख हुआ है और तर्कसंगतिकरण (यानी और अधिक तर्कसंगत बनाना) की भी बार-बार चर्चा हुई है। वेबर समाज को तर्कसंगत स्वरूप में प्रस्तुत करने के लिए प्रयत्नशील रहे है। उन्होंने अपनी रचनाओं में तर्कसंगति और तर्कसंगतिकरण दोनों अवधाणाओं का प्रयोग कई बार कई अर्थों में किया है। वेबर ने अपनी सभी कृतियों में सामाजिक रूपों की तर्कसंगति और उनके परिवर्तन से संबधित तर्क को भी खोजने का प्रयास किया है।

वेबर ने तर्कसंगति को सामाजिक व्यवस्था के तर्कसंगतिकरण की प्रक्रिया के रूप में देखा। यह सब मानव समाज में तर्कसंगत संगठनों और संस्थानों के उद्भव से संभव हुआ है.। उन्होंने मानव मूल्यों, विश्वासों, विचारों और क्रियाओं में तर्कसंगतिकरण की प्रक्रिया का प्रतिबिंब पाया। उन्होंने सामाजिक विज्ञानों में भी तर्कसंगति के तत्वों का अस्तित्व खोजा।

आधुनिक समाजों में तर्कसंगतिकरण की विशेषता की अभिव्यक्ति 'ज़्वैकरैशनल' (zweckrational) कार्यों के संदर्भ में हुई है, ये क्रिया उससे प्राप्त होने वाले लक्ष्य से संबंधित है। इस प्रकार तर्कसंगति की प्रक्रिया के क्षेत्र का विस्तार आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि व्यवस्थाओं और संगठनों तक है। वेबर ने तर्कसंगति की अवधारणा का व्यापक रूप से प्रयोग सामाजिक क्रियाओं, सामाजिक संगठनों और सामाजिक प्रक्रियाओं के अध्ययन के लिए किया है। उन्होंने इसका प्रयोग समाज की वैज्ञानिक जांच की प्रणाली के रूप में भी किया। इस प्रकार वेबर की रचनाओं में तर्कसंगति का समावेश दो पूर्णतया भिन्न लेकिन परस्पर संबंद्ध विधियों से हुआ है।

3.2.2 धर्म का अर्थ (Meaning of Religion)

इस बारे में हम सभी के अपने-अपने सवाल हैं कि जीवन का अर्थ क्या है, संसार में हमारा स्थान क्या है और क्या ऐसी कोई दिव्य शक्ति है जो हमारे जीवन में घटने वाली घटनाओं को नियंत्रित करती है, और जिससे हम अपने कर्मों के लिए मार्गदर्शन चाहते हैं। इस तरह के सवालों का जवाब देने के सिलसिले में जिन विभिन्न विश्वास या मतों और रीतियों का जन्म होता है वे विभिन्न रूप धारण कर लेती हैं। इस तरह, कुछ लोग तो अदृश्य शक्ति में विश्वास करने लगते है और कुछ पेड़ों और पशुओं को पवित्र मानते हैं। इस बुनियादी सवाल का जवाब देने का प्रयास करने वाले विश्वास और रीतियां अनिश्चितता की स्थितियों में सांत्वना की स्रोत होती हैं। और यह सामाजिक व्यवस्था का आधार होता है। मिलजुल कर माने जाने वाले इन्हीं विश्वासों और रीतियों के तंत्र को धर्म कहते हैं। इस तरह धर्म को किसी पवित्र सत्ता पर ध्यान केंद्रित करने वाले सहभाजित और स्थिर विश्वासों, प्रतीकों और संस्कारों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। (कौंकलिन 1984 : 296)। हमारी परिभाषा इस बात पर भी ज़ोर देती है कि धर्म सहभाजित होता है, अर्थात किसी धर्म को मानने वाले मिलजुल कर उस में अपना विश्वास व्यक्त करते हैं। इस तरह, किसी एक व्यक्ति की विश्वास पद्धति या किसी एक व्यक्ति के जीवन दर्शन को धर्म नहीं माना जा सकता, क्योंकि उसमें दूसरों की सहभागिता नहीं होती। और अंत में धर्म किसी पवित्र सत्ता पर अपना ध्यान केंद्रित करता है। इमाइल दुर्खाइम ने इस पवित्र सत्ता को एक ऐसी आदर्श और दैवीय सत्ता के रूप में परिभाषित किया है जो दैनिक जीवन से अलग है। दिव्य शक्ति के

रूप में यह पवित्र सत्ता पशुओं या मनुष्यों में, प्राकृतिक या कृत्रिम वस्तुओं में वास कर सकती है। विभिन्न धर्मों में पवित्र सत्ता के प्रति अलग-अलग विश्वास होता है।

3.2.3 धर्म का सामाजिक महत्व (Social Significance of Religion)

समाजशास्त्र के विद्यार्थी होने के नाते हमारा उद्देश्य विश्वास पद्धति के सही या गलत होने का पता लगाना नहीं है। हमारा ध्येय तो धर्म के सामाजिक महत्व और विभिन्न संस्थाओं के साथ इसके संबंध को समझना है। समाजशास्त्री धर्म को एक ऐसी संस्था के रूप में लेते हैं जो समाज का निर्माण करने वाली संस्थाओं के जटिल तंत्र का एक अंग है। धर्म का एक महत्वपूर्ण परिणाम आस्था रखने वालों के बीच संबंध को मजबूत बनाना है। कुछ आलोचकों का मानना है कि कभी-कभी धर्म पवित्र सत्ता से संबंधित विश्वास और रीतियों के स्रोत से अधिक सामाजिक पहचान के स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण हो जाता है। अनेक लोग अपने विश्वास के कारण नहीं बल्कि समाज में स्थान पाने के उद्देश्य से धर्म में हिस्सा लेते हैं। इसके परिणामस्वरूप, अक्सर यह देखने को मिलता है कि गिरजाघर, मंदिर, मस्जिद और यहूदी उपासनाघर सामाजिक केंद्र का रूप ले लेते हैं। धर्म ही वह बिंदु है जहाँ विभिन्न समूह एकजुट हो कर किसी उद्देश्य के लिए लाभान्वित होते हैं।

एक ही समाज में कई धर्म होने से उनमें टकराव भी हो सकता है। हम सभी जानते हैं कि मनुष्य जाति के इतिहास में धार्मिक समूहों का कितना दमन हुआ है। धर्म के नाम पर लड़ी गई लड़ाइयों ने पूरब और पश्चिम दोनों को नष्ट किया है। हाँ, अक्सर अर्थ और राजनीति भी लड़ाइयों के प्रमुख कारण रहे हैं। ईसाइयों ने मुसलमानों से लड़ाई लड़ी तो कैथोलिक अनुयायियों ने प्रोटेस्टैंट संप्रदाय के लोगों से लड़ाई लड़ी। भारत में ही हमने मुसलमानों और हिंदुओं में विभाजन के समय हुए झगड़ों में लाखों को शरणार्थी होते देखा है।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ये लड़ाइयाँ जितनी राजनीतिक थी उतनी ही धार्मिक भी थीं। जैसे कि हम देखते है, धर्म अक्सर अभिव्यक्ति का वाहक और पहचान का रूप होता है। जिसे आधार बना कर कोई समूह अपने लिए और अधिक सत्ता जुटाने या और किसी ऐसे ही उद्देश्य के लिए एकजुट होता है। राजनीति का बुनियादी अर्थ यह होता है कि किन्हीं विशिष्ट ध्येयों की प्राप्ति के लिए सत्ता का वितरण कहाँ और कैसे होता है। जिन समाजों में (भिन्न उद्देश्यों या ध्येयों वाले भिन्न-भिन्न समूह होते हैं वहाँ झगड़े अनिवार्य होते हैं। उनमें से प्रत्येक समूह तब अपनी एक पहचान बनाता है जिन की मदद से वह अपने उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास करता है। उनमें एक धार्मिक पहचान भी होती है। धर्म और राजनीति के बीच के इस अंतःसंबंध का विश्लेषण करने से पहले, हमारे लिए राजनीति का अर्थ समझ लेना उपयोगी रहेगा।

3.2.4 राजनीति का अर्थ (Meaning of Politics)

राजनीति और राजनीतिक प्रक्रिया को विभिन्न समयों में अलग-अलग तरीके से परिभाषित किया गया है। प्रस्तुत विषय के संदर्भ में राजनीति के अर्थ के दो पहलुओं की चर्चा करना उपयोगी होगा।

1) टकराव (या संघर्ष) और एकीकरण की दो विरोधी शक्तियाँ राजनीति की प्रकृति को तय करती हैं। मानवीय समाजों में टकरावों की कई परतें होती हैं। राजनीति का संबंध ऐसे ही टकरावों से होता है। टकराव अनिवार्य तो होते हैं, लेकिन वे समाज में उपार्जित करने योग्य ध्येय या आदर्श कभी नहीं हो सकते। टकरावों का समाधान और समाज का एकीकरण और सहयोग ही सभी समाजों का आदर्श होता है। टकराव के

प्रत्येक विश्लेषण का अंत उनके समाधान सुझाने में होता है। किसी अभिन्न और एकजुट समाज के प्रति चलाया गया कोई भी अभियान उतना ही अनिवार्य होता है जितना की टकरावों या मतभेदों का उदय। स्थितियों के बदलने के साथ कुछ टकराव तो कम हो जाते हैं, कुछ बने रहते हैं, कुछ नियंत्रित हो जाते हैं और कुछ नए टकराव पैदा हो जाते हैं। विविध सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाएँ किसी मेल-मिलाप से रहने वाले समाज के लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद करती हैं, तो राजनीतिक प्रक्रिया की भी एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इस प्रकार, एकीकरण और टकराव दो परस्पर विरोधी शक्तियों से राजनैतिक प्रक्रिया का निर्माण होता है।

सामाजिक संस्थाएँ टकराव और एकीकरण दोनों ही दृष्टियों से महत्वपूर्ण हैं, और वे राजनीति और राजनीतिक प्रक्रिया से जुड़ी होती हैं। ये संस्थाएँ, उनसे जुड़े विचार और मुद्दे अक्सर व्यक्तियों की पहचान के आधार का निर्माण करते हैं और उसकी परिणति टकराव की स्थितियों में होती है। साथ ही साथ सामाजिक संस्थाएँ खुद संस्थाओं के भीतर और उनके बीच की एकता और एकीकरण की स्थिति बनाती हैं। इन प्रतिस्पर्धी स्थितियों में प्रत्येक व्यक्ति के अलग-अलग हित और उसकी पहचान शामिल है; इन स्थितियों से पैदा होने वाले टकराव का समाधान करने की प्रक्रिया में अति वांछित एकीकरण या एकता की स्थिति बनती है और, इसी से राजनीति आकार लेती है।

ii) राजनीति को समझने का दूसरा पहलू है वितरणकारी दृष्टिकोण, जो हैरल्ड डी, लासवेल (Harold D. Laswell) के लेखन से जुड़ा है। हम सभी जानते हैं कि समाज में सत्ता और संसाधन के वितरण में अत्यधिक विषमता है। सभी समुदायों या व्यक्तियों को संसाधनों, सामानों और पदों का बराबर हिस्सा नहीं मिलता। उनमें से कुछ इन अधिकारों और संपदा और संसाधनों से वंचित रह जाते हैं।

राजनीतिक सत्ता अधिकार और प्राधिकार दिलाती है। सत्ता और संसाधनों के बीच इसी निकट के संबंध के चलते लासवेल (1936) ने कहा कि राजनीति का अर्थ यह है कि 'किसको क्या, कब और कैसे मिलता है।'

कोई समूह या समुदाय यह महसूस कर सकता है कि वह समाज में संसाधनों और पदों से वंचित है। ऐसा कोई भी समुदाय या समूह अपने आप को अलाभकारी स्थिति में पाता है और सत्ताविहीन अनुभव करता है; इसकी प्रतिक्रिया में वह अधिकार प्राप्त राजनीतिक शासन या राज्य की वैधता को चुनौती दे सकता है। इस प्रकार का सापेक्ष अभाव या यह बोध समूह या समुदाय की लाभबंदी और राजनीतिक हिंसा का भी एक महत्वपूर्ण कारक रहा है।

जैसे कि हम पहले चर्चा कर चुके हैं। धर्म केवल दैवीय क्षेत्र तक सीमित नहीं रहता। इस का और भी व्यापक सामाजिक महत्व होता है। यह नैतिक और नीतिपरक दृष्टि देता है और जनता और समुदायों का मार्गदर्शन करता है।

जनता से सत्ता प्राप्त करने वाला कोई भी राज्यतंत्र इसलिए धार्मिक पहल को मान्यता और स्थान देता है। यह एक ऐसा पहलू है, जो व्यक्ति और समुदायों दोनों के लिए महत्वपूर्ण है।

सरल शब्दों में कहें तो, राजनीति एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है जिसमें समाज में सत्ता का संगठन निहित होता है। राजनीतिक तंत्र यह प्रभाव छोड़ने का प्रयास करते हैं कि उनकी सत्ता वैध है और उस का कारण उत्पीड़न नहीं है। आप को वेबर की बात याद हो तो आप को स्मरण हो जाएगा कि जो प्राधिकार या अधिकार वैध होता है और उस का स्रोत होती हैं (1) परंपरा, (2) तर्कसंगत ढंग से लागू किए गए नियम और विनियम और (3) करिश्मा।

आज के समाज में राजनीतिक प्राधिकरण अपने प्राधिकार, समाज के व्यापक वर्ग से प्राप्त करता है। इसलिए जनता के हित और उसकी माँगे राजनीतिक प्राधिकरण को प्रभावित करती हैं। धर्म सामुदायिक जीवन का एक पक्ष है जो राजनीति को प्रभावित करता है।

बोध प्रश्न 1

i) धर्म के सामाजिक महत्व को संक्षेप में व्यक्त कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

ii) राजनीति और राजनीतिक प्रक्रिया के तीन परिप्रेक्ष्यों के नाम बताइए?

.....

.....

.....

.....

.....

iii) राजनीति को समझने का वितरणकारी दृष्टिकोण ..... के लेखन से जुड़ा है।

3.3 राज्य और धर्मनिरपेक्षीकरण (State and Secularisation)

अब तक हम ने राजनीति के अर्थ की विवेचना अत्यधिक व्यापक और सामान्य अर्थों में की है। अगले अनुभाग में हम राज्य शब्द की व्याख्या करेंगे। राज्य, समाज में अधिकारों के वितरण से संबंध रखने वाली एक राजनीतिक संस्था है। राज्य को आज हम जिस अर्थ में लेते हैं उस का उदय अधिकार के क्षेत्र को धर्मनिरपेक्ष और धार्मिक क्षेत्र से अलग करने की आवश्यकता से हुआ है।

3.3.1 राज्य की अवधारणा (The Concept of State)

मैक्स वेबर ने राज्य की परिभाषा एक ऐसे मानव समुदाय के रूप में की है जो किसी क्षेत्र विशेष में शारीरिक शक्ति के वैध उपयोग के एकाधिकार का दावा करता है। इस तरह राज्य सामाजिक नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण माध्यम है, जिसके कार्यों को हमेशा बल प्रयोग का समर्थन प्राप्त कानूनों के माध्यम से पूरा किया जाता है।

कामटे और स्पेंसर ने राज्य के उदय को समाजों के बढ़ते आकार और जटिलता का परिणाम माना है। उनके सर्वेक्षण में कुछ वैधता अवश्य है। मानवविज्ञानियों और समाजशास्त्रियों ने सरल समाजों का जो अध्ययन किया उससे समाज की जटिलता और आकार तथा व्यवस्थित राजनीतिक प्राधिकरण या सत्ता के बीच कुछ सह संबंध की बात प्रकाश में आई है। प्रारंभिक समुदायों के बारे में लिखते हुए आर.एच.लोई. ने कहा है कि वे अवश्य ही छोटे-छोटे और समतावादी और "सगोत्र समूह' के समान रहें होंगे। इस तरह सगोत्रता ने एकता को बनाए रखने में अत्यंत प्रभावी भमिका निभाई। समाज न्यूनाधिक कम भेदित (भेदभाव

वाला) था, इसलिए धार्मिक संस्थाओं और राजनीतिक संस्थाओं के बीच कोई बहुत बड़ा भेद नहीं किया जाता था। समुदाय का मुखिया धार्मिक प्रमुख भी होता था और राजनीतिक प्रमुख भी। समाज की बढ़ती जटिलता के साथ धार्मिक और गैर धार्मिक क्षेत्रों को पृथक रखने की आवश्यकता महसूस की गई जिससे सत्ता के क्षेत्र का लोकतांत्रिक किया जा सके। यूरोप विशेषकर इंगलैंड में चर्च और राजा के अधिकार या सत्ता के क्षेत्रों को वैधानिक रूप से अलग-अलग करने की दिशा में राजनीति ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया से संबंधित अपने अगले अनुभाग में हम विचार करेंगे कि पृथक्करण की यह प्रक्रिया किस प्रकार हुई। लेकिन इस प्रक्रिया को समझने से पहले, आइए हम धर्मनिरपेक्षीकरण के अर्थ को जानें।

3.3.2 धर्मनिरपेक्षीकरण (Secularisation)

समाज में किसी एक धर्म के राजनीतिक और सामाजिक महत्व में आने वाली कमी को धर्मनिरपेक्षीकरण माना जाता है। धर्मनिरपेक्षीकरण को सामान्यतया आधुनिक और प्रौद्योगिकी की दृष्टि से उन्नत समाजों से जोड़ा जाता है। इस शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन शब्द 'सेक्युलम' से हुई जिसका अर्थ है 'वर्तमान युग'। अपने सामान्य प्रचलन में धर्मनिरपेक्षीकरण का अर्थ एक ऐसी प्रभुत्वशाली सामाजिक प्रक्रिया से लिया जाने लगा जिसमें संसार को एक ऐसी दृष्टि से देखा जाने लगा जो धार्मिक दृष्टि से हट कर थी। संसार का धार्मिक दृष्टिकोण तो विश्वास पर आधारित होता है जिसे प्रमाणित नहीं किया जा सकता, जबकि वैज्ञानिक दृष्टिकोण ज्ञान पर आधारित होता है, जिसे प्रत्यक्ष तौर पर प्रमाणित किया जा सकता है (मैकिओनिज, 1987,पृ. 438)। अब यह स्थिति अधिकाधिक बनती जा रही है कि धर्म का हमारे ऊपर प्रभाव कम से कम होता जा रहा है। फिर भी धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया ने धर्म को नागरिक जीवन से दूर एक अलग और विशिष्ट स्थान दिया है। धर्मनिरपेक्षीकरण के राजनीतिक आयाम का बुनियादी अर्थ है राजनीतिक सत्ता का धार्मिक सत्ता से पृथक्करण। इस संदर्भ में धर्मनिपेक्ष राज्य होता है जो किसी एक धर्म का समर्थन नहीं करता है और न ही उसका पक्ष लेता है, इसके विपरीत, वह राज्य सभी नागरिकों को समान दर्जा देने का प्रयास करता है, चाहे उनका धर्म कोई भी क्यों न हो, धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्रों के पृथक्करण को समझने के लिए आइए हम धर्मनिरपेक्षीकरण पर अपने अगले अनुभाग की ओर बढ़े।

3.3.3 धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया (The Process of Secularisation)

जब कभी भी (और यदि अक्सर ऐसा हो) तो आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के साथ उसमें शामिल कई अन्य विकासात्मक कार्य भी रहते हैं, लेकिन विभेदन (भेद या अंतर करना) एक ऐसी प्रक्रिया थी जिस का अर्थ था कि सामाजिक संस्थाओं के अपने विशेष कार्य थे और अलग-अलग कार्यों के प्रभावी ढंग से निपटारे के लिए उन्होंने अपनी-अलग संस्थाएँ बनाई। अक्सर 'परंपरावादी' और 'आधुनिक' समाजों में इसी दृष्टि से भेद किया जाता है। परंपरावादी समाज में जहाँ अलग-अलग कार्य वही संस्था (एँ) करती हैं। वहीं आधुनिक समाज में अलग-अलग कार्य उन कार्यों के लिए विशेष रूप से स्थापित संस्थाएँ करती हैं। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप, सामाजिक जीवन के 'पवित्र' (या धार्मिक) और 'धर्मनिरपेक्ष' क्षेत्रों में अंतर किया गया। धार्मिक पक्ष व्यापक रूप से 'पवित्र' वर्ग में शामिल हैं। धार्मिक चिंतन की विशेषता बताते हुए दुर्खाइम स्पष्ट करता है कि "विश्वास, मिथक, सिद्धांत और अनुश्रुतियाँ या पौराणिक कथाएं पवित्र वस्तुओं की प्रकृति को व्यक्त करने वाले प्रतीक या प्रतीक पद्धतियाँ हैं :" (दुर्खाइम , 1969 : 42)। पवित्र और धर्मनिरपेक्ष के भेद पर वापस आते हुए यहां हम यह कहेंगे कि समाज में धर्म से हट कर होने वाली गतिविधियों को धर्मनिरपेक्ष

में शामिल किया गया। राजनीति और राजनीतिक प्रक्रिया को आधुनिक समाज की धर्मनिरपेक्ष प्रक्रिया में शामिल किया गया। इस पृथक्करण में, शासक या राजा और संगठित चर्च (विशेषकर इंग्लैंड में) के बीच वर्चस्व की लड़ाई ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

जैसा कि हम पहले पढ़ चुके हैं, समूचे समाज को अपनी जकड़ में लेने वाली आधुनिकीकरण की प्रक्रिया की परिणति भी तथाकथित 'विभेदन' में हुई। इस मैदान (या विभेदन) की परिणति राजनीतिक प्रक्रिया के और अधिक 'धर्मनिरपेक्षीकरण' के रूप में हुई। आदर्श के न्यूनतम स्तर पर यह स्वीकार किया गया कि राजनीति और धर्म को एक दूसरे को प्रभावित करने से बाज आना चाहिए।

आधुनिक समाजों में तो राजनीति का यह आदर्श रहा है, लेकिन आज की राजनीति की प्रक्रिया ने इस प्रकार के पृथक्करण को लगभग असंभव कर दिया है।

सोचिए और करिए 1

विभिन्न पत्र/पत्रिकाओं में धर्म और राजनीति पर छपे लेखों की कतरनें काट कर रखिए और इन लेखों को पढ़ने के बाद दो पृष्ठ का एक निबंध लिखिए। इस निबंध पर आप अपने अध्ययन केंद्र के छात्रों और मित्रों के साथ चर्चा भी कर सकते हैं।

3.4 राजनीति की प्रकृति (The Nature of Politics)

समाज और राज्यतंत्र में हमेशा एक अंतःक्रियात्मक संबंध रहा है, लेकिन लोकतांत्रिक ढाँचे में राजनीति ने इस प्रकार के संबंध को और भी अधिक एक-दूसरे पर निर्भर कर दिया है। जब हम 20वीं शताब्दी के अंत में लोकतंत्र की बात करते हैं तो हमारा मतलब केवल एक और किस्म की सरकार से नहीं होता : यह तो राजनीति और शासन की एक व्यवस्था है जिसे संसार के लगभग सभी देश स्वीकार करते और अपनाते हैं।

बॉक्स 3.1 लोकतांत्रिक राजनीति

जीवन की एक शैली और शासन की एक किस्म के रूप में, लोकतंत्र समानता और खुलेपन का आश्य देता है जिसमें व्यक्ति और समूह सत्ता के लिए होड़ करते हैं। इस व्यवस्था के कार्य करने के लिए निश्चित प्रतिमान और नियम स्वस्थ प्रतियोगिता के मूल्यों को आरोपित करते है। लोकतंत्र के लिए स्वाभाविक रूप से महत्वपूर्ण व्यक्तिगत प्राथमिकताओं को अनेक शक्तियों और कारक प्रभावित करते हैं। जिस तरह से ये एक दूसरे में मिश्रित होती और अंततः मानव व्यवहार को प्रभावित करती हैं वह बेहद जटिल प्रक्रिया है जिसमें किसी निश्चित महत्व के क्रम में कारकों को व्यवस्थित करना एकदम आसान नहीं है। एक और स्तर पर सामाजिक समह लोकतांत्रिक राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

समाज उन व्यक्तियों का समूह नहीं होता जो एक दूसरे से कटे होते हैं। व्यक्ति हमेशा सामाजिक समूहों के सदस्य होते हैं; और वे केवल एकल समूहों के नहीं, बल्कि ऐसे कई मामलों के एक साथ सदस्य होते हैं। प्रत्येक समाज मौजूदा मूल्यों के संदर्भ में कुछ समूहों में बँटा होता है और इस प्रकार के समूहों की संख्या मूल्यों की संख्या पर निर्भर करती है। जाति, वर्ग, धर्म, प्रजातीयता, समान व्यवसाय, और अंततः सत्ता, सभी समूहों के निर्माण का आधार बन सकते हैं, और बनते भी हैं। व्यक्ति एक साथ एक से अधिक समूहों के सदस्य हो सकते हैं। लोकतांत्रिक राजनीति के लिए ऐसे समूहों का महत्व यह है कि ये समूह अक्सर राजनीति की प्रक्रिया के संगठनकारी खंडों का निर्माण करते हैं।

धर्म सामूहिक पहचान का एक केन्द्रीय कारक रहा है। इस प्रकार के समूहों के निर्माण का सामाजिक आधार अन्य समूहों और व्यक्तिगत व्यवहार को भी प्रभावित करता है। समूह गतिशीलता के संदर्भ में भी धर्म एक प्रेरक कारक रहा है। लोकतांत्रिक राजनीति क्योंकि घनिष्ठ रूप से प्रभावित करता है। ये प्रभाव, स्वरूप और गहनता दोनों दृष्टियाँ अलग-अलग समाज में अलग अलग होते हैं।

कुछ सामाजिक सिद्धांतों ने यह संकेत दिया है कि व्यक्तियों की धर्म जैसी ''आदिम पहचानों का स्थान आधुनिकीकरण और औद्योगीकरण जैसी और अधिक/सामाजिक गतियाँ ले लेंगी और अंत में इनके स्थान पर भी तकनीकी व्यावसायिक समूह, वर्ग आदि जैसी और भी अधिक 'आधुनिक' या 'स्थायी' पहचानें आ जाएंगी। आधुनिकीकरण के विशेषकर प्रारंभिक चरण के आधुनिकीकरण के सिद्धांत में यह निश्चित संकेत था कि 'आधुनिकीकरण' की प्रक्रियाएँ, समय और बढ़ते संभावना क्षेत्र के साथ व्यक्तिगत और सामूहिक पहचान के 'आदिम' या 'पारंपरिक' आधार को अगर गायब या समाप्त नहीं कर देंगी तो कम से कम उनका स्थानापन्न तो कर ही देंगी। 'धार्मिक' पहचान उनमें से एक है।

इसी तरह 'वर्ग' का सिद्धांत सामाजिक संगठन के आर्थिक आधार को अत्यधिक महत्व देता है और आर्थिक वर्ग को 'वास्तविक' सामाजिक समूह मानता है और अन्य समूहों को 'झूठा' और 'भ्रामक' मानता है। इस सिद्धांत के अनुसार समूह अंततः अपने आप को वर्ग के आधार पर संगठित कर लेंगे। धर्म और प्रजातीयता या अक्सर कथित "सांस्कृतिक अंतः प्रदेशों के आधार पर टिकी संस्थाओं को अस्थायी और 'विघटनकारी' कारक माना जाता है, व्यवस्था के अभिन्न तत्व नहीं।

उपर्युक्त सिद्धांतों में सामाजिक परिवर्तन को एक ही दिशा में चलने वाला माना गया है, जबकि विभिन्न समाजों के अनुभवों से हमें परिवर्तन के विभिन्न मार्गों का संकेत मिलता है, जिनकी अपनी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विशेषताएं रही हैं। कुछ समाजों में परिवर्तन की गति किसी विशेष चरण में कम हुई या रूकी भी है। समूह निर्माण की वास्तविक प्रक्रिया और उनकी अन्योन्यक्रिया इतनी अधिक गतिशील रही है जितना कि उपर्युक्त सिद्धांतों से भी संकेत नहीं मिलता।

लोकतांत्रिक राजनीति में ऐसे अनेक समूह आते हैं जिन्हें 'आदिम माना जाता हैं। वास्तव में ऐसे समूहों की संख्या और शक्ति दोनों में वृद्धि हुई है। इसका कारण लोकतांत्रिक राजनीति में शक्तियों की अन्योन्यक्रिया है। समाजवादी देशों में भी स्थिति भिन्न नहीं रही है, जहाँ धार्मिक समूहों की अवहेलना के लिए सचेत और कठोर कदम उठाए गए थे। वहाँ धार्मिक पहचानों के बार-बार सिर उठाने के कारण सैद्धांतिक, वैचारिक और राजनीतिक किस्म की समस्याएँ भी उठ खड़ी हुई हैं। तीसरी दुनिया के देशों के सामने धार्मिक पहचानों और समूहों की समस्याएं और भी गंभीर रूप में पेश आई हैं। अब इसकी व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं रह गई है कि धर्म सामान्यतया राजनीति में और विशेषतया लोकतांत्रिक राजनीति का एक महत्वपूर्ण कारक है।

इस चरण पर तो हमें इस पर चर्चा करने की आवश्यकता है कि राजनीति में धार्मिक शक्तियों को प्रभावित करने वाले कारक कौन से हैं। हम यह पहले भी पढ़ चुके है कि किसी भी देश की राजनीति में धर्म अमहत्वपूर्ण तो हुआ ही नहीं है, बल्कि कुछ देशों की अपेक्षा अन्य में इसका प्रभाव कहीं अधिक है। इसके लिए अनेक कारक जिम्मेदार हैं। हम अगले अनुभाग में समाज की प्रकृति और सामाजिक संरचनाओं और समूहों के संदर्भ में इन विभिन्न कारकों पर विचार करेंगे।

सोचिए और करिए 2

क्या आप किसी राजनीतिक दल के सदस्य हैं? अगर नहीं हैं तो भी, क्या आप सोचते हैं कि धर्म और राजनीति को मिलाया जाना चाहिए ? इस विषय में अपने विचार लिखिए और उन्हें अध्ययन केंद्र के अपने अन्य साथियों के विचारों से मिलाइए।

3.5 राजनीति में धर्म (Religion in Politics)

धर्म और राजनीति का संबंध अनेक कारकों पर निर्भर है : (1) समाज की एकरूपता/अनेकरूपता; (2) आर्थिक प्रस्थिति, प्रजातीयता आदि पर आधारित अन्य वर्गों के साथ धार्मिक समूह किस सीमा तक सह-अस्तिव में रहते हैं ? (3) धर्म/धर्मों की प्रकृति और (4) इस प्रकार के संबंध का ऐतिहासिक संदर्भ। हम इन विषयों पर अगले अनुभाग में विचार करेंगे।

3.5.1 एकरूपता/अनेकरूपता (Homogeneity / Heterogeneity)

कोई भी समाज इस अर्थ में 'बहुवादी' होता है कि उसमें अनेक प्रकार और स्तरित के विभाजन होते हैं जैसे धार्मिक, आर्थिक, प्रजातीय, जनजातीय इत्यादि। लेकिन कुछ समाजों में ये विभाजन या वर्ग अन्य समाजों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट होते हैं। इन विभाजनों के संदर्भ में ही समाजों को 'एकरूप' और 'अनेकरूप' कहा जाता है। ये विभाजन बहुलवादी समाजों में अधिक स्पष्ट होते हैं। व्यक्तिगत पहचान और समूह संरचना का एक प्रमुख आधार होने के कारण धर्म इन विभाजनों का एक महत्वपूर्ण अंग है। एकरूप समाजों में राजनीति पर धर्म का प्रभाव कम स्पष्ट होता है, लेकिन अनेकरूप समाजों में इस प्रकार का प्रभाव अधिक स्पष्ट होता है। जैसा कि आर. आर. अल्फोर्ड ने कहा है, धर्म और राजनीति का संबंध केवल उन्हीं राष्ट्रों में समस्या बनता है जो धार्मिक दृष्टि से एकरूप नहीं होते।

3.5.2 धार्मिक समूह और समाज के अन्य विभाजन (Religious Groups and other Divisions in Society)

धर्म और राजनीति के इस संबंध के संदर्भ में दूसरा महत्वपूर्ण कारक यह है कि वर्ग, प्रजातीयता, अप्रवासी आदि जैसे अन्य सामाजिक विभाजनों के साथ धार्मिक समूह किस सीमा तक सह-अस्तित्व में रहे हैं। अनुभव सिद्ध अध्ययनों से विभिन्न वर्गों या विभाजनों में इस प्रकार के संबंधों/साहचर्य का संकेत मिलता है। अमेरिका के विभिन्न भागों में किए गए अनेक अध्ययनों से निम्न वर्गों में कुछ धार्मिक समूहों (उदाहरणार्थ, कैथोलिकों) के जमाव का पता चला है। इसी तरह, भारत में कुछ धार्मिक अल्पसंख्यक समूह निम्न आर्थिक वर्ग की श्रेणी में आते हैं। प्रजातीयता और अप्रवास का संबंध जटिल रूप में धर्म और वर्ग से होता है। अमेरिकी संस्कृति का लेखा जोखा प्रस्तुत करने वाली चर्चित पुस्तक *बियांड द मैल्टिंग पॉट* (1973) के लेखकों का यह निष्कर्ष था कि कैथोलिक : यहूदी संबंधों की सूक्ष्म जांच से प्रजातीय संबंध की कुछ प्रवृत्तियाँ सामने आयेंगी, वैसे उनमें एक प्रकार के वर्गीय संबंध भी हैं। इन अमेरिकी उदाहरणों का उल्लेख द मैल्टिंग पॉट का प्रतीक बनने वाले समाज में भी विभिन्न विभाजनों या वर्गों का एक दूसरे के साथ सह-अस्तित्व में रहने की मिसाल प्रस्तुत करना है। जबकि, ऐसे समाज से यह अपेक्षा थी कि प्रजाति, धर्म, राष्ट्रीयता, वर्ग और ऐसे ही अन्य तमाम विभाजन मिलकर मनुष्य की एक नई प्रजाति तैयार कर देंगे। इस प्रभावी पुस्तक के लेखकों को यह ऐलान करने में कोई हिचकिचाहट नहीं हुई कि प्रवासी समूहों के उद्विकास के अगले चरण में एक ऐसा कैथोलिक समूह सम्मिलित होगा जिसमें आयरिश, इतालवी, पोलिश और जर्मन कैथोलिकों के बीच भेद लगातार कम हो रहे

हों। यहूदी समूह में पूर्वी यूरोपीय, जर्मन और निकट पूर्वीय यहूदी समूहों के बीच विभाजन रेखा मिटती जा रही है। श्वेत प्रोटेस्टेंट समूहों में एंग्लो-सैक्सन, डच, प्राचीन-जर्मन और स्कैंडिनेविया प्रोटेस्टैंट और श्वेत प्रोटेस्टैंट आप्रवासी भी एक दूसरे का स्वागत करते हैं। (ग्लेजर और मोहमिहन, 1973 : 314) उपर्युक्त समूहों में धार्मिक, प्रजातीय, आर्थिक और आप्रवासी दृष्टि से विभाजित समूह शामिल है जो एक दूसरे के साथ सह-अस्तित्व में रहते हैं। कारकों के इस प्रकार के संयोजन की स्थिति में राजनीति पर उनका प्रभाव और भी गहरा हो जाता है। इस प्रकार उपर्युक्त लेखक कहते हैं कि "धर्म और प्रजाति अमेरिकी समुदाय के उद्विकास के अगले चरण की विशेषता है'' (वहीं)।

3.5.3 धर्म/धर्मों की प्रकृति (Nature of Religion(s))

तीसरा महत्वपूर्ण कारक है धर्म/धर्मों की प्रकृति, और राजनीति के प्रति उसका रवैया। आर. आर. अल्फोर्ड ने अपनी पुस्तक 'पार्टी एंड सोसाइटी' में राजनीतिक दलों के ''धार्मिक आकर्शण'' के संदर्भ में एंग्लो-अमेरिकी देशों और महाद्वीपीय यूरोपीय देशों के बीच भिन्नता की बात की है। आर.आर, अल्फोर्ड ने जिन कारकों को (व्याख्या के लिए) महत्वपूर्ण पाया वह यह भिन्नता है कि महाद्वीपीय "यूरोपीय देश प्रमुख रूप से "प्रोटस्टैट हैं, जबकि एंग्लो अमेरिकी अंग्रेजी भाषी देश ''प्रमुख रूप से कैथोलिक हैं। (आल्फोर्ड, 1963)। प्रोटेस्टैंट संप्रदाय के उदय के इतिहास के कारण चर्च और राज्य पर कहीं अधिक बल है। मैक्स वेबर ने अपनी पुस्तक *द प्रोटेस्टैंट ेथिक एंड द स्प्रिट ऑफ कैपिटलिज्म* (1930) में धर्म की प्रकृति का संबंध औद्योगीकरण की धर्म-निरपेक्ष शक्तियों के साथ जोड़ा है। ऐसे कुछ धर्म हैं जो तमाम सामाजिक प्रक्रियाओं के धर्म की 'अधीनता' में होने में विश्वास करते हैं। उनके लिए 'राजनीति' को 'धर्म' से अलग करना कठिन होता है। अधिक सूक्ष्मता से लें तो, इनके अनुसार 'राजनीति' धर्म के लिए है। कुछ अन्य धर्म अधिक समन्वयकारी हैं और तुलनात्मक रूप से उनके संगठन में खुलापन है। ये धर्म समाज की अन्य प्रक्रियाओं के प्रति अधिक सहिष्णु होते हैं और वहाँ राजनीति और धर्म के अलगाव के लिए अधिक अनुकूल स्थितियां होती हैं।

धर्म की प्रकृति में ये भिन्नताएँ आंशिक रूप से धर्म में ही अंतर्निहित होती हैं। लेकिन ये भिन्नताएँ धर्म को आकार देने वाली विभिन्न ऐतिहासिक शक्तियों से आती हैं।

3.5.4 ऐतिहासिक प्रक्रिया (Historical Process)

चौथा कारक है ऐतिहासिक प्रक्रिया। यह कारक महत्वपूर्ण भी है और जटिल भी। यह दो स्तरों पर कार्य करता है। (1) धर्म का उदय विभिन्न चरणों में विभिन्न मार्गों के जरिए हुआ है, जिससे उनका एक अलग विशिष्ट चरित्र बना है। (2) धर्म और अन्य सामाजिक समूहों और प्रक्रियाओं, विशेषकर राजनीतिक सत्ता के बीच संबंध की ऐतिहासिक प्रक्रिया ने समाज में धर्म के वास्तविक स्थान को प्रभावित किया है। ये दो ऐतिहासिक शक्तियाँ एक दूसरे से गहरे रूप से जुड़ी हैं और उनकी अन्योन्यक्रिया में जटिलता है। धर्म और राजनीति के संबंध के संदर्भ में एंग्लो अमेरिकी अक्सर महाद्वीपीय देशों के उपर्युक्त उदाहरण इस अंतर को दिलचस्प बनाते हैं। ऐतिहासिक कारणों की व्याख्या करते हुए आर.आर अल्फोर्ड कहते हैं कि फ्रांस, इटली और बेल्जियम जैसे महाद्वीपीय देशों में, जहाँ धार्मिक पार्टियां मजबूत हैं, धार्मिक स्वतंत्रता साथ-साथ अर्जित की गई और वह राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ जुड़ी हुई थी। उसका परिणाम यह हुआ कि आज भी धर्म, वर्गों और राजनीति में गहरा संबंध है। दूसरी ओर, ब्रिटेन में धर्म और राजनीति के मुद्दे अलग-अलग उभरे और उनका हल भी अलग-अलग हुआ। इसके परिणामस्वरूप, न केवल चर्च और राज्य कानूनी तौर पर अलग हो गए, बल्कि राजनीतिक दलों का गठन भी कभी धार्मिक आधार पर नहीं हुआ।

ऐतिहासिक प्रक्रिया को और आगे स्पष्ट करते हुए, अल्फोर्ड कहते हैं, ''इंग्लैंड में 1500 के दशक के सुधार आंदोलन की विशेषताओं ने, महाद्वीप के देशों में हुए सुधार आंदोलन की विशेषताओं के विपरीत, ब्रिटिश संस्कृति की धार्मिक सामासिकता की वैधता और चर्चा और राज्य के अत्यधिक अलगाव की स्थिति में योगदान किया होगा'' ऐतिहासिक प्रक्रिया की विशेषताओं के कारण, कुछ धर्मों से संबंधित सामाजिक समूहों में स्पष्ट राजनीतिक व्यवहार देखने को मिलते हैं।

3.6 धर्म और राजनीति/राज्य : एक सामान्य समीक्षा (Religion and Politics/ State: An Overview)

आम बोलचाल में, धर्म का राजनीति से कुछ लेना देना नहीं है। इसलिए अक्सर यही मान कर चला जाता है कि धर्म और राजनीति के रास्ते अलग-अलग हैं। धर्म की साधारणीकृत व्याख्या के अनुसार तो धर्म दैवीय सत्ता से संबंधित रीतियों ओर विश्वासों से नाता रखता है। लेकिन हम देख चुके हैं कि धर्म का संबंध केवल दैवीय क्षेत्र से नहीं है। इसका और भी व्यापक सामाजिक महत्व है- केवल पहचान बनाने वाली शक्ति के रूप में नहीं, अपितु यह व्यक्तियों को नैतिक और नीतिपरक दृष्टि और दर्शन भी देता है, जो उनका तथा समुदायों का मागदर्शन करता है।

राजनीति का संबंध सत्ता के उपयोग और संगठन से है। इस सत्ता को लागू करने वाले अभिकरण के नाते 'राज्य' के पास शासन करने का अधिकार होता है। लेकिन सत्ता से हमारा वास्तव में क्या तात्पर्य है? यह सत्ता कहाँ से जन्म लेती है ? सत्ता अनेक कारकों और प्रभावों का मिश्रण है। आप को वेबर की व्याख्या याद हो तो, उन्होंने सत्ता को दूसरे व्यक्ति का दमन या नियंत्रण करने का सामर्थ्य बताया है। प्राधिकार 'वैधीकृत सत्ता' है। अर्थात लोग किसी प्राधिकरण विशेष को 'आदेश देने का अधिकार' प्रदान करते हैं, और इसलिए यह 'अपेक्षा की जाती है कि इस प्रकार के आदेश का पालन किया जाएगा। सत्ता और वैधता का यही तत्व राजनीति को धर्म से जोड़ता है जबकि ये दोनों ही स्वाधीन हैं।

सत्ता केवल बाहुबल, शस्त्र विद्या या पुलिस बल को आवश्यक नहीं बनाती। वैधता के चक्कर में, उसे जनता का समर्थन भी लेना होता है। जैसा कि हम जानते हैं, लोगों को अगर यह लगता है कि किसी राजनीतिक तंत्र या राज्य विशेष से उनके हितों या जीवन दृष्टि का खतरा है तो वे हर स्थिति में शक्ति का प्रतिरोध, विरोध और अवहेलना करेंगे। इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है जिनमें जनता का समर्थन नहीं प्राप्त होने से या अवैध राज्यों/ शासनों को जनता ने अपने हाथ में ले लिया, और उनका तख्ता पलट दिया या फिर उनके खिलाफ एक प्रतिबल खड़ा कर देने के प्रयास हुए हैं। समाजविज्ञानी और विद्वान इस बात पर सहमत होंगे कि सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक मूल्य और वंश, जनजाति, जाति, धर्म और भाषा आदि के प्रति जुड़ाव जैसी आदिम निष्ठाएँ राजनीति को प्रभावित और परिसीमित करती हैं। बहुधा ही, इन विचारों में आस्था रखने वाले लोग इन्हें पवित्र और महत्वपूर्ण मानते हैं। जब कभी इन विचारों या मूल्यों के अस्तिव को खतरा होता है, राज्य की विश्वसनीयता पर सवाल उठते हैं, कभी-कभी तो इसका प्रतिरोध होता है और अक्सर पुनर्गठन की मांग उठती है। यह स्पष्ट है कि राजनीति केवल राजनीतिक मूल्यों से नहीं बनती, इस पर गैर - राजनीतिक विचारों और मूल्यों का भी अच्छा खासा प्रभाव पड़ता है। अंतिम विश्लेषण में इन सभी मूल्यों का स्रोत 'जनता' होती है। यही कारण है कि राज्य के अपने आप को धर्मनिरपेक्ष घोषित करने के बावजूद हम राजनीति की दैनिक गतिविधियों में नेतृत्व या प्राधिकरण से धार्मिक समस्याओं यां मामलों के व्यावहारिक समाधान के लिए सामंजस्य करते है ताकि उसे उद्योगपति, किसान, मजदूर और अध्यापक के साथ-साथ पुरोहित वर्ग का भी समर्थन मिले।

हमने राजनीति की प्रकृति पर आधारित अनुभाग में लोकतांत्रिक राजनीति की प्रकृति का विवेचन किया है जिस में सभी के लिए समानता और सभी के साथ समान व्यवहार का सिद्धांत समाहित होता है। यह आदर्श ऐसा है जिसे आसानी से प्राप्त नहीं किया जा सकता क्योंकि समाज में परस्पर विरोधी हितों वाले प्रतिद्वंद्वी समूह हमेशा ही रहते हैं। राजनीतिक सरमाएदार अपनी ओर से इन हितों को समायोजित करने का प्रयास करते है। धर्म उन महत्वपूर्ण कारकों में है जिसे केंद्र मान कर समूह अपनी पहचान करते हैं और अपने हितों को लाभबंद करते हैं। धर्म और राजनीति राज्य के बीच अपरिहार्य संबंध का यही कारण है।

बोध प्रश्न 2

i) धर्मनिरपेक्षीकरण से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

ii) राजनीति और धम्र के संबंध को कौन से कारक प्रभावित करते हैं।

.....

.....

.....

.....

.....

iii) वे कौन से दो सिद्धांत हैं जिनके अनुसार धार्मिक पहचान का स्थान वर्गीय और धर्मनिरपेक्षीय पहचानें ले सकती हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3.7 सारांश

इस इकाई की शुरुआत हमने धर्म और राजनीति के बढ़ते अंतःसंबंध पर चर्चा के साथ की। इस समस्या को समझने के लिए हमने धर्म और राजनीति पर विस्तार से चर्चा की है। हमने यह भी चर्चा की कि किस प्रकार राजनीतिक प्राधिकरण और धार्मिक प्राधिकरण के बीच सत्ता के लिए होने वाले टकराव से धर्मनिरेपक्ष राज्य का उदय हुआ। इस इकाई में हमने राजनीति की प्रक्रिया का भी अध्ययन किया जिसमें विभिन्न समूहों के बीच सत्ता का संघर्ष अनिवार्य रूप से समाहित है। धर्म समूह निर्माण के लिए भी महत्वपूर्ण आधार तैयार करता है, और यह भी राजनीति को प्रभावित करने वाला एक कारक है।

अंत में, इस इकाई में हमने उन कुछ कारकों पर भी चर्चा की जो धर्म और राजनीति के संबंध को निश्चित आकार देने के लिए जिम्मेदार हैं।

3.8 संदर्भ

कौंकलिन जॉन ई. (1985) *इंट्रोडक्शन टू सोशियालॉजी, मैंकमिलन* : न्यूयार्क

एस.एन.झा एंड रषीदुद्दीन खां (संपादक गण), (1989), *द स्टेट, पॉलिटिकलन प्रोसेस एंड आइडेंडिटी* : रिफ्लेक्शनस् ऑन मॉडर्न इंडिया, नई दिल्लीःसेज।

अल्फोर्ड, आर.आर. 1963, *पार्टी एंड सोसाइटी*, रैड मैकनेली।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री (2005) *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO 13), नई दिल्ली : इग्नू।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री (2005) *समाज और धर्म* (ESO 15), नई दिल्ली, इग्नू।

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) धर्म विश्वासों और व्यवहारों का समूह होता है जिसमें लोगों के समुदाय की भागीदारी होती है जिसे जीवन और मृत्यु आदि के समय में प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है। निश्चित रूप से धर्म में आलौकिक शक्तियों के प्रति आस्था सम्मिलित होती है जो दैनिक जीवन से अलग होती है। दुर्खाइम इसे पवित्र मानते हैं। धर्म व्यक्तिगत और उसी तरह से समुदाय के लिए भी सामाजिक महत्व रखता है, यह अनिश्चितता के समय राहत का स्रोत है। यह दैनिक व्यवहार के लिए जीवन में नैतिक और अचार संहिता के मानदंड का निर्धारण करता है। अतः यह समूह को पहचान देता है।

ii) राजनीति और राजनीतिक प्रक्रिया पर ये तीन परिप्रेक्ष्य हैं : क) समाकलनात्मक दृष्टिकोण, ख) वितरणात्मक दृष्टिकोण, और ग) व्यवहारात्मक दृष्टिकोण।

iii) राजनीतिक विवरणात्मक दृष्टिकोण की समझ हारोल्ड डी. लासवंल के लेखन के साथ जुड़ी है।

बोध प्रश्न 2

i) 'सेक्युलम' शब्द लैटिन भाषा से लिया गया है जिसका अर्थ 'वर्तमान युग' है। इसलिए सेक्युलर (धर्मनिरपेक्ष) शब्द आधुनिक, प्रौद्योगिक रूप से उन्नत समाजों के साथ जुड़ा है। धर्मनिरपेक्ष शब्द का आशय एक तर्कपूर्ण समझ के साथ जुड़ा हुआ है जो धार्मिक विश्वास के बिल्कुल विपरीत है। राजनीतिक संदर्भ में धर्मनिरपेक्ष शब्द राजनीति और धर्म के बीच एक सीमा रेखा स्थापित करता है अर्थात राजनीतिक और धार्मिक प्राधिकार को अलग-अलग स्थापित करता है। धर्मनिरपेक्ष राज्य का सीधा संबंध नागरिकों के मामलों से होता है न कि धार्मिक अर्थ में पवित्र शब्द से।

ii) धर्म और राजनीति के संबंध को प्रभावित करने वाले कुछ कारक हैं : (क) अनेकरूपता/एकरूपता; (ख) धर्म और समाज के अन्य विभाजनों के बीच का संबंध; (ग) धर्म की प्रकृति और राजनीति के प्रति इसकी अभिवृत्तिय और (घ) ऐतिहासिक प्रक्रिया।

iii) वे दो सिद्धांत हैं- वर्ग सिद्धांत' और आधुनिकीकरण का सिद्धांत।

इकाई 4 ईशशास्त्र और परलोक सिद्धांत : जादू, विज्ञान तथा धर्म*

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 जादू-टोना, विज्ञान और धर्म के बारे में वाद-विवाद

- 4.2.1 धर्म के बारे में टाइलर के विचार
- 4.2.2 जादू-टोना, विज्ञान और धर्म के बारे में फ्रेजर के विचार
- 4.2.3 टोटमवाद के बारे में फ्रेजर और दुर्खाइम के विचार
- 4.2.4 मलिनॉस्की का दृष्टिकोणः विशिष्टता में सार्विकी

4.3 लौकिक क्षेत्र

- 4.3.1 ट्राब्रिएंड द्वीपवासियों में खेती-बाड़ी का प्रचलन
- 4.3.2 ट्राब्रिएंड द्वीपवासियों द्वारा केनो-निर्माण
- 4.3.3 क्या परंपरागत ज्ञान विज्ञान के समान था?

4.4 पवित्र क्षेत्र - धर्म

- 4.4.1 दीक्षा अनुष्ठान समारोह
- 4.4.2 मृत्यु से संबंधित अनुष्ठान
- 4.4.3 धार्मिक आचरण के कुछ अन्य उदाहरण
- 4.4.4 धर्म के बारे में मलिनॉस्की के विचारों का सारांश

4.5 पवित्र क्षेत्र - जादू-टोना

- 4.5.1 जादू-टोने की परंपरा
- 4.5.2 'माना' और जादू-टोना
- 4.5.3 जादू-टोना और अनुभव

4.6 समानताएं और असमानताएं

- 4.6.1 जादू-टोना और विज्ञान
- 4.6.2 जादू-टोना और धर्म

4.7 जादू-टोना, विज्ञान और धर्म का प्रकार्य

4.8 सारांश

4.9 संदर्भ

4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपके लिए संभव होगा :

- जादू-टोना, विज्ञान और धर्म के बारे में टाइलर, फ्रेजर और दुर्खाइम के विचारों की चर्चा करना;

*इग्नू पाठ्यसामग्री; *समाजशास्त्रीय सिद्धांत* (ESO 13) की इकाई 23 से अंगीकृत नीता माथुर द्वारा संशोधन।

- मलिनॉस्को द्वारा दिए गए धार्मिक और जादू-टोना संबंधी व्यवहार के उदाहरणों के बारे में बताना;
- विज्ञान और जादू-टोने में तथा जादू-टोने और धर्म में अंतर स्पष्ट करना।

4.1 प्रस्तावना

जादू टोने, विज्ञान और धर्म के अध्ययन में ब्रैन्जलॉ मैलिनॉस्की का बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान है। इस इकाई में समुदाय विशेष के अध्ययन द्वारा संस्कृति के सार्विकीय पक्षों के प्रति उसके दृष्टिकोण का वर्णन किया गया है। मलिनॉस्की के दृष्टिकोण के सटीक उदाहरण के तौर पर हमने यहाँ उसके जादू-टोना, विज्ञान और धर्म पर निबंध "मैजिक, साइंस एंड रीलिजन" को चुना है। इसमें सरल समाज संस्कृति के इन पक्षों में समानताओं तथा भिन्नताओं का बहुत ही सरस रूप में प्रस्तुत किया गया है (इस विषय में 1948 में प्रकाशित मैजिक, सांइस एंड रिलीजन एण्ड अदर ऐसेज नामक पुस्तक में रॉबर्ट रैडक्लिफ द्वारा लिखित प्रस्तावना देखिए) । इस निबंध की विषय-वस्तु के सूक्ष्म अध्ययन से आपको मलिनॉस्की की प्रतिभा का आभास इस दृष्टि से होगा कि कैसे उसने ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों के समाज के अध्ययन में मानव संस्कृति के सार्विकीय तत्वों को देखने का प्रयास किया। दूसरे, आपको यह भी स्पष्ट होगा कि इस निबंध में मलिनॉस्की ने अपने आपको धर्म, विज्ञान और जादू-टोने के बारे में प्रचलित किसी एक परिप्रेक्ष्य तक सीमित नहीं रखा। उसने अपने विशिष्ट दृष्टिकोण के संदर्भ में पहले टाइलर, फ्रेजर, मैरेट और दुर्खाइम के धर्म संबंधी विभिन्न विचारों की चर्चा की। इससे हमें उस काल में इन विषयों पर होने वाली परिचर्चाओं के बारे में उपयोगी विवरण मिल जाता है। इस इकाई में हमने मलिनॉस्की के विचारों का सार प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस चर्चा के दौरान हमने उसके विचारों में पाई जाने वाली त्रुटियों और असंगतियों का भी उल्लेख किया है।

इस इकाई के आरंभ में हमने मलिनॉस्की के समय में प्रचलित जादू-टोना, विज्ञान और धर्म की धारणाओं का विवरण दिया है। इसके बाद उस क्षेत्र के बारे में विचार किया गया है जो मलिनॉस्की की दृष्टि में लौकिक (the profane) है। इसमें विज्ञान अथवा मानव द्वारा अपने पर्यावरण पर तर्कसंगत नियत्रण का उल्लेख है। मलिनॉस्की ने यह भी दिखाया है कि सरल समाज के लोगों में अनुभव और तर्क पर आधारित व्यापक ज्ञान पाया जाता है। इस ज्ञान के प्रयोग से उन्हें अपने दैनिक जीवन के क्रियाकलापों को चलाने तथा कठिन पर्यावरण में भी अपना अस्तित्व बनाए रखने में मदद मिलती है।

इकाई के दूसरे चरण में हमने जादू-टोना, और धर्म के क्षेत्रों की चर्चा की है। मलिनॉस्की ने जादू-टोना और धर्म को पवित्र (the sacred) क्षेत्र के अंतर्गत रखा है। मलिनॉस्की के अनुसार आदिम मानव की दृष्टि में विज्ञान के संसार तथा जादू-टोना और धर्म के संसार के बीच स्पष्ट अंतर है। हमने यह देखने का प्रयास किया है कि किस प्रकार लौकिक और पवित्र ये दोनों क्षेत्र एक-दूसरे से अलग हैं। दूसरी ओर कैसे धर्म और जादू-टोने में आपस में अंतर है। इस प्रकार, मलिनॉस्की का यह अति सुगम सिद्धांत आपके सामने है जिसमें (i) वैज्ञानिक, जादू-टोने से संबंधित और धार्मिक व्यवहार की प्रकृति और उनके अंतर के बारे में विचार किया गया है (ii) यहाँ दिखाया गया है कि किस प्रकार ये तीनों पक्ष मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करते हैं और फलतः समाज की सत्ता को बनाए रखने में सहायक होते हैं।

4.2 जादू-टोना, विज्ञान और धर्म के बारे में वाद-विवाद

इस भाग में हमने मलिनॉस्की के समय में प्रचलित जादू-टोना, विज्ञान और धर्म के संबंध में धारणाओं के बारे में संक्षेप में विचार किया है। अपने निबंध के पहले भाग में उसने इनके बारे में चर्चा की है और बाद के भागों में कुछ मुद्दों का विस्तार से वर्णन किया है। हमने भी यहां मलिनॉस्की द्वारा अपनाए क्रम को लेते हुए पहले धर्म के बारे में टाइलर के विचारों पर चर्चा की है।

4.2.1 धर्म के बारे में टाइलर के विचार

मलिनॉस्की के अनुसार एडवर्ड टाइलर को धर्म के नृशास्त्रीय अध्ययन का संस्थापक कहा जा सकता है। टाइलर की दृष्टि में जीववाद (animism) अर्थात अध्यात्मिक जीवों में आस्था आदिम धर्म का सार है। टाइलर की यह धारणा है कि सरल समाज में लोगों के स्वप्नों, विभ्रांतियों (hallucination) और अंतर्दृष्टि संबंधी विचार से ऐसा प्रतीत होता है कि उनको आत्मा और शरीर के पृथक होने में विश्वास था। मृत्यु के बाद भी आत्मा जीवित रहती है क्योंकि वह स्वप्नों, स्मृतियों और अंतर्दृष्टि में दिखाई देती है। इसी से उनमें भूत-प्रेतों, पुरखों की आत्माओं और मृत्यु के बाद परलोक में विश्वास की धारणा पैदा हुई। टाइलर के मत में सामान्यतः मानव मात्र में विशेष रूप से सरल समाज के लोगों में यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि मृत्यु के बाद के विश्व की कल्पना का आधार हमारे उस विश्व का प्रतिरूप है, जिसमें हम रहते हैं। इसके अलावा ऐसा समझा जाता है, कि जानवर, पौधे और अन्य पदार्थों मनुष्य के क्रियाकलापों में सहायक या बाधक होते हैं, उनमें आत्माऐं होती है।

टाइलर के इस विचार से मलिनॉस्की सहमत नहीं हैं कि सरल मानव समाज के लोक महा विचार-प्रधान प्राणी (rational being) होते हैं। मलिनॉस्की सरल समाजों के अपने गहरे ज्ञान के आधार पर कहते है कि सरल समाज के लोग मानव अपने रोजमर्रा के मछली पकड़ने, खेती-बाड़ी आदि के कार्यो और जनजातीय गोष्ठियों में इतना अधिक व्यस्त रहता है कि उसे स्वप्नों और अंतर्दृष्टियों के बारे में सोचने की फुरसत कहां? इस तरह टाइलर के विचारों की आलोचना के बाद मलिनॉस्की ने जेम्स फेजर के विचारों की ओर ध्यान केंद्रित किया।

4.2.2 जादू-टोना, विज्ञान और धर्म के बारे में फ्रेजर के विचार

फ्रेजर की रचनाएं मुख्य रूप से जादू-टोने की समस्याओं और इसके विज्ञान और धर्म के साथ संबंध पर हैं। उनमें टोटमवाद और उर्वरता-पंथ (fertility cult) के बारे में विचार भी शामिल हैं।

फ्रेजर की प्रसिद्ध रचना *दि गोल्डन बाउ* में कहा गया है कि आदिम धर्म में जीववाद (animism) के अतिरिक्त कई अन्य मान्यताएं थीं तथा जीववाद को आदिम-संस्कृति का प्रमुख विश्वास नहीं कहा जा सकता। फ्रेजर के अनुसार रोजमर्रा की उत्तरजीविता अस्तित्व को बनाए रखने के लिए प्रकृति को नियंत्रित करने के प्रयास में आदिम मानव जादू-टोने का सहारा लेता था। जब उसे जादू-टोने की निश्फलता का आभास हो गया तो आदिम मानव राक्षसों, प्रेतात्माओं और देवताओं से प्रार्थना करने की ओर प्रवष्त हुआ। फ्रेजर ने धर्म और जादू-टोने में स्पष्ट अंतर किया है। प्रकृति पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए उच्च आध्यात्मिक शक्तियों को संतुष्ट करने या मना लेने को उसने धर्म कहा है जबकि तंत्र-मंत्रों और अनुष्ठानों आदि के द्वारा सीधे नियंत्रण स्थापित करने को जादू-टोना कहा है। फ्रेजर का कथन है कि जादू-टोना यह प्रदर्शित करता है कि मनुष्य को प्रकृति पर प्रत्यक्ष नियंत्रण

स्थापित करने की क्षमता पर पूर्ण विश्वास है। यह प्रवृति जादू-टोने को वैज्ञानिक क्रियाविधि के समान बना देती है। फ्रेजर का कहना है कि धर्म के उदय से यह पता चलता है कि मनुष्य ने प्रकृति पर प्रत्यक्ष नियंत्रण स्थापित करने की अपनी असमर्थता को स्वीकार कर लिया है। इस प्रकार, धर्म मनुष्य को जादू-टोने से ऊपर उठा देता है। इतना ही नहीं, उसकी यह भी मान्यता है कि धर्म का स्थान विज्ञान के समकक्ष है।

फ्रेजर के ये विचार जर्मनी के प्रूस (Preuss), इंग्लैंड के मैरेट और फ्रांस के ह्यूबर्ट और मॉस आदि यरोपीय विद्वानों के लिए प्रेरणादायक सिद्ध हुए। इन विद्वानों ने फ्रेजर की आलोचना करते हए कहा कि चाहे विज्ञान और जादू-टोना एक जैसे प्रतीत हों, लेकिन वे एक-दूसरे से नितांत भिन्न हैं। उदाहरण के तौर पर विज्ञान तर्क पर आधारित है और इसका विकास पर्यवेक्षणों और परीक्षणों के आधार पर होता है, जबकि जादू-टोने का जन्म परंपरा से होता है और यह रहस्यपूर्ण ज्ञान से घिरा होता है। दूसरे, वैज्ञानिक ज्ञान को कोई भी व्यक्ति प्राप्त कर सकता है, जबकि रहस्यात्मक सूत्रों को गुप्त रखा जाता है और इनका ज्ञान कुछ गिने-चुने लोगों को ही दिया जाता है। तीसरे, विज्ञान का आधार प्राकृतिक शक्तियों की धारणा में है, जबकि जादू-टोने का जन्म रहस्यात्मक शक्तियों की धारणा से होता है।

चूंकि जादू का उदय रहस्यात्म्क शक्ति के विचार से होता है। जनजातीय समाजों में इसे भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है, जैसे मलेनेशियाई लोग इसे *'माना'* कहते हैं तो ऑस्ट्रेलियाई जनजातियां इसे 'अरुंगक्विल्था' कहती हैं। बहुत से अमरीकी इंडियन समूहों में इसे 'वाकान', 'ओरेंडा', 'मानिटु' नामों से जाना जाता है। ऐसी अलौकिक शक्ति में विश्वास पूर्ण-जीववादी धर्म के सार के रूप में स्थापित होता है और इसे विज्ञान से पूर्णतया भिन्न रूप में दिखाया गया है।

मलिनॉस्की ने *'माना'* की तरह की अलौकिक शक्ति में विश्वास के संबंध में कई प्रश्न उठाए। उसने जानना चाहा कि क्या यह एक मूलभूत विचार है जो सरल समाज के व्यक्तियों के मस्तिष्क की अपनी उपज है या मानव मनोविज्ञान के कहीं सरल और अपेक्षाकृत आधारभूत तत्वों से इसकी व्याख्या की जा सकती है, या यह ऐसी वास्तविकता है जिससे सरल समाज में मानव घिरा रहता है। इन प्रश्नों के उत्तर देने से पूर्व मलिनॉस्की टोटमवाद के धार्मिक विश्वासों की समस्याओं के बारे में तथा इस विषय में फ्रेजर और दुर्खाइम के विचारों के बारे में चर्चा करता है। क्योंकि इन विद्वानों ने टोटमवाद की व्याख्या के माध्यम से ही धर्म के बारे में अपने मत बनाए थे, अगले अनुभाग में इसी विषय पर चर्चा होगी।

बोध प्रश्न 1

i) जीववाद (animism) की परिभाषा लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ii) सरल समाज में परंपरागत लोगों के जादू-टोने और धर्म के उद्भव के बारे में फ्रेजर का मत लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

4.2.3 टोटमवाद पर फ्रेजर और दुर्खाइम के विचार

फ्रेजर ने टोटमवाद को समूह विशेष के लोगों और प्राकृतिक अथवा कृत्रिम जातियों के बीच संबंध के रूप में परिभाषित किया है। इन वस्तुओं को एक समूह के लोगों का टोटम माना जाता है। यह कहा जा सकता है कि टोटमवाद एक धार्मिक व्यवस्था है और सामाजिक समूह बनाने की विधि है। एक धार्मिक व्यवस्था के रूप में यह आदिम लोगों की उस इच्छा को व्यक्त करती है जो उन्हें विभिन्न प्राणियों, वनस्पति की जातियों जैसी महत्वपूर्ण वस्तुओं से संबंध स्थापित करने की प्रेरणा देती है। लोगों का जो समूह उन्हें टोटम के रूप में मानता है, उस समूह के लिए इन वस्तुओं को नष्ट करना या मारना वर्जित है। दूसरी ओर, वह समूह उन टोटम वस्तुओं की संख्या बढ़ाने के लिए अनुष्ठान या समारोह आयोजित करता है। सामाजिक समूहों के निर्माण में टोटम वस्तुएं समूहों को छोटे-छोटे समूहों में विभाजित करने का आधार बनती हैं। इस प्रकार, इसके द्वारा धार्मिक विश्वास के समाजशास्त्रीय महत्व का एक पूर्ण रूप से नया पक्ष उभर कर सामने आया। इसी कारण से धर्म से संबंधित मानवशास्त्र के अग्रणी रॉबर्ट्सन स्मिथ (1889) ने यह निष्कर्ष निकाला कि सरल समाज में धर्म व्यक्तियों से संबंधित नहीं था अपितु उसका अनिवार्यतः सारे समुदाय से संबंध था।

दुखाईम के धर्म संबंधी अध्ययन के अनुसार टोटमवाद धर्म का प्राचीनतम रूप है। रॉबर्ट्सन स्मिथ के समान दुर्खाइम भी धर्म और समाज के बीच बहुत निकट का संबंध मानता है। उसके मत में टोटमीय सिद्धांत भी 'माना' या 'अलौकिक शक्ति' के समान है। दुर्खाइम (1976: 206) ने लिखा है कि समाज का अपने सदस्यों के लिए वही महत्व है जो ईश्वर का अपने भक्तों के लिए होता है। वह धर्म को समाज का ही देवीकृत रूप मानता है। दुर्खाइम ने धार्मिक व्यवहार के सामूहिक पक्ष पर विशेष बल दिया।

मलिनॉस्की को दुर्खाइम के निरूपण में कई समस्याएं दिखाई दी। वह धर्म की इस रूप में कल्पना नहीं कर सकते जिसमें एकांत में किए गए मनन-चिंतन की कोई जगह नहीं है। मलिनॉस्की (1948:56) के अनुसार अमरत्व की धारणा भी व्यक्तिपरक है। इसका सामाजिक या सामूहिक पक्ष से कोई विशेष संबंध नहीं है। दूसरी बात मलिनॉस्की ने कहा कि समाज में नैतिकता की मान्यता व्यक्तिगत दायित्व तथा अंतरात्मा से उपजे विवेक पर निर्भर करती है, न कि सामाजिक दण्ड-विधान के डर पर। तीसरी बात, मैलिनॉस्की ने यह कही कि हमें सामाजिक शक्तियों की महत्ता को कम नही समझना चाहिए और आदिम समूहों के धार्मिक व्यवहार को समझने में दोनों, व्यक्ति और समाज, को महत्व देना चाहिए। साथ में, उसने यह भी कहा कि एक ओर जहां धार्मिक समारोह सार्वजनिक रूप से मनाए जाते हैं, वहीं दूसरी ओर धार्मिक अंतर्दृष्टि एकांत में किए गए मनन-चिंतन से ही प्राप्त होती है। दुर्खाइम के विचारों की आलोचना करते हुए उसने यह भी कहा कि समाज के सभी सामूहिक उद्यमों को धार्मिक क्रियाकलाप के रूप में निरूपित नहीं किया जा सकता। इसलिए हम समाज और

धर्म को पर्यायवाची नहीं मान सकते। उसने युद्धरत सैनिकों, नौका-दौड़ प्रतियोगिता और द्वीपवासियों के आपसी झगड़ों के उदाहरण दिए। मैलिनॉस्की के अनुसार ये सभी सामूहिक क्रिया-व्यापार हैं लेकिन इनका धर्म से कोई संबंध नहीं है। इस प्रकार मलिनॉस्की के अनुसार सामूहिक और धार्मिक क्रिया-व्यापार अन्योन्यव्यापी (overlapping) तो हो सकते हैं लेकिन वे समानार्थक नहीं हो सकते। उसने इस तर्क को आगे बढ़ाते हुए कहा कि समाज में धार्मिक और गैर-धार्मिक अथवा लौकिक दोनों पक्ष समाहित हैं। इसलिए समाज को केवल धार्मिक या पावन पक्षों के समकक्ष नहीं माना जा सकता। इन तर्कों के आधार पर मलिनॉस्की ने दुर्खाइम द्वारा विकसित धर्म के समाजशास्त्रीय सिद्धांत को अस्वीकार कर दिया।

मलिनॉस्की की आलोचनाओं की पृष्ठभूमि में अब हमने यह देखने का प्रयास किया है कि इस बारे में मलिनॉस्की के क्या विचार हैं। जादू-टोने, विज्ञान और धर्म के संबंध में उनके विचारों का सारांश प्रस्तुत करने से पूर्व आइए, हम उन स्तरों को देखें जिन पर उनके विचार मुखरित होते हैं। अगले अनुभाग में जादू-टोने, विज्ञान और धर्म की समस्याओं पर मलिनॉस्की के विचारों को समझने के लिए उसके विशिष्ट और सार्विकीय संदर्भ को संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

4.2.4 मलिनॉस्की का दृष्टिकोणः विशिष्टता (Particular) में सार्विकी/सार्वभौमिक (Universal)

मलिनॉस्की के विचार उस सीमा-रेखा पर हैं जहां एक ओर मानव-व्यवहार के पहले से चले आए सार्विक रूप से वैध सिद्धांत हैं तो दूसरी ओर समाज विशेष में अनुभवाश्रित अनुसंधान के प्रति नई-नई ललक दिखाई देती है। मलिनॉस्की को आसानी से उन्नीसवीं शताब्दी के उन विकासवादी विद्वानों के साथ रखा जा सकता है जिन्होंने धर्म और जादू-टोने की प्रकृति और उद्भव के बारे में विचार किया है। उसे इस युग का ऐसा अंतिम विद्वान कहा जा सकता है जिसने धर्म और जादू-टोने के सार्विक रूप से लागू होने वाले सिद्धांतों की व्याख्या की। लेकिन हमें इस तथ्य को भी स्वीकार करना होगा कि मलिनॉस्की ने उस नए चरण को शुरू किया जिसमें समाज विशेष की सावधानीपूर्वक पर्यवेक्षित एवं संग्रह की हुई सामग्री को अत्यधिक महत्व दिया गया। इस प्रकार, वह एक ऐसा नृशास्त्री है जो पुराने प्रश्नों के नए ढंग से उत्तर देता है।

इस प्रकार हमारे सामने ऐसे दो स्पष्ट स्तर उभर कर आते हैं जिन पर उसके जादू-टोने, विज्ञान और धर्म से संबंधित विचारों का निर्माण हुआ और जिन्हें उसने अपने इस निबंध में प्रस्तुत किया, जिन्हें हम इस इकाई में प्रस्तुत करने जा रहे हैं। इनमें से एक स्तर विशिष्ट समाज का यानी ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों का है। वह इन द्वीपवासियों को मानवीयता का एक अत्युत्कृष्ठ उदाहरण मानते हैं। दूसरे स्तर पर उसने इन द्वीपवासियों के बीच क्षेत्रीय शोधकार्य के दौरान एकत्र की हुई सामग्री का उपयोग जादू-टोने और धर्म का प्रकृति और प्रकार्य पर अपने सर्वव्यापी विचारों को समझाने के लिए किया। उनकी दृष्टि में सामाजिक जीवन के पर्यवेक्षण और सार्वत्रिक रूप से वैध सिद्धांतों के बीच संबंध बैठाना एक बहुत ही साधारण और सहज बात है। इस निबंध में उसने इन दोनों स्तरों को बहुत ही सहज रूप में मिला दिया है और जादू-टोने, विज्ञान और धर्म के समाजशास्त्रीय महत्व के बारे में पैदा होने वाले प्रश्नों के उत्तर भी दे दिए हैं। इतना ही नहीं, उन्होंने टॉब्रिएंड द्वीपवासियों के विशिष्ट संदर्भ में प्राप्त जानकारी के आधार पर संपूर्ण मानवता के स्तर पर कुछ सामान्य निष्कर्ष भी निकाले है। साथ ही उन्होंने इन तत्वों की वैधता को सिद्ध करने का भी प्रयास किया है। मानव-व्यवहार के इन तीन महत्वपूर्ण पक्षों (जादू, धर्म और विज्ञान) पर उनके

विचारों का अध्ययन करते समय ऊपर बताए गए दोनों स्तरों को ध्यान में रखना उपयोगी होगा।

उसने समाजिक जीवन के तीनों पक्षों को नए ढंग से देखा। इन तत्वों के अध्ययन के लिए उसने नए दृष्टिकोण से सोचा। उसके मत में इन तीनों पक्षों के अस्तित्व का कुछ अर्थ होना चाहिए। आइए, हम देखें कि कैसे वे इनके अस्तित्व के संबंध में कोई अर्थ खोजने का प्रयास करते हैं। नाडेल (1957: 208) के मत में यदि उसका अर्थ खोजने का तरीका भले ही बहुत सहज है और परिष्कृत नहीं है, फिर भी यह विज्ञान, धर्म और जादू-टोने के अध्ययन का नया तरीका जरूर है। यह मानना पड़ेगा कि इस नए मार्गदर्शन के अभाव में उसके उत्तरवर्ती नृशास्त्री वह प्रगति नहीं कर सकते थे जो उन्होंने बाद में की। समाजशास्त्रीय इतिहास और विकास के अध्येताओं को इस परिप्रेक्ष्य में यह समझने में सहायता मिलती है कि मलिनॉस्की ने विज्ञान, जादू और धर्म के अध्ययन में तर्कसंगत सिद्धांत (the logic of rationality) को कैसे लागू किया।

अमरीकी नृशास्त्री रॉबर्ट रैडफील्ड (1948: 9) के अनुसार मलिनॉस्की के 'मैजिक, साइंस एंड रिलीजन' शीर्षक निबंध में हमें लेखक की विशेष प्रतिभा का आभास मिलता है। उसकी विशेषता यह है कि उसने सफलतापूर्वक विशिष्टता में सर्वत्रता (the universal in the particular) को केवल अनुभव ही नहीं किया अपितु उसे सिद्ध भी किया।

मलिनॉस्की ने जिस प्रकार धर्म और जादू-टोने के अर्थ और प्रकार्य को प्रदर्शित किया, उससे सामाजिक स्थितियों में मानव हितों में उसकी गहरी रुचि का पता चलता है। रॉबर्ट रैडफील्ड के अनसार मलिनॉस्की की मानवीयता एक ओर उसे नृशास्त्र को विज्ञान के स्तर से उठाकर कला के स्तर तक ले जाने में मदद करती है। दूसरी ओर वह मानव-जीवन की संवेदनशील वास्तविकता को और विज्ञान के नीरस अमूर्तीकरण को मिलाने में भी सफल होता है। अब आपको निश्चय ही यह जानने की उत्सुकता होगी कि मलिनॉस्की ने अपने निबंध में क्या कहा था। इकाई के अगले भाग में उसके द्वारा बताए गए आदिम ज्ञान और जीवन के व्यावहारिक क्षेत्र में उसके अनुप्रयोग का संक्षिप्त विवरण दिया जायेगा। इसे उसने जीवन का लौकिक पक्ष (domain of the profane) कहा है।

4.3 लौकिक क्षेत्र

मलिनॉस्की अपनी बात एक प्रश्न से शुरू करते हैं। प्रश्न है- क्या सरल समाज के लोगों का दृष्टिकोण तर्क पर आधारित है? क्या उनका अपने आस-पास के वातावरण पर तर्कसंगत नियंत्रण होता है? - उसने लेवी ब्रूल (1926) के इस विचार को अस्वीकार किया कि आदिम मानव को तर्क से स्पष्ट अरूचि है (देखिए बॉक्स 4.1)। मलिनॉस्की ने इस प्रश्न का उत्तर दिया कि हर सरल समाज समुदाय के लोगों के पास ज्ञान का काफी बड़ा भंडार है जो अनुभव और तर्क पर आधारित है। इसके समर्थन में उसने ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों के कला, शिल्प और आर्थिक क्रियाकलापों से संबंधित व्यवहार का उदाहरण दिया। इन क्रियाकलापों से संबंधित व्यवहार स्पष्ट रूप से जादू-टोने और धर्म से अलग है। उनका यह अनुभवाश्रित ज्ञान तर्क-युक्ति में विश्वास पर आधारित है। मलिनॉस्की ने इसे जीवन का लौकिक पक्ष कहा है अर्थात् जो धार्मिक या जादू-टोने वाला नहीं है। उसने यह दिखाया कि आदिवासी स्वयं भी लौकिक क्षेत्र को धर्म और जादू-टोने से अलग रखते है। यहाँ हमने लौकिक क्षेत्र पर चर्चा के लिए मलिनॉस्की द्वारा उद्धृत बहुत से उदाहरणों में से दो उदाहरणों को चुना है। इन उदाहरणों से यह पता चलेगा कि परंपरागत लोगों में भी वैज्ञानिक ज्ञान का अस्तित्व होता है। ये उदाहरण मलिनॉस्की के ट्रॉब्रिएंड द्वीपसमूह में किए गए शोधकार्य से प्राप्त सामग्री से लिए गए हैं।

बॉक्स 4.1 लूसीयिन लेवी-ब्रुल

लूसीयिन लेवी-ब्रुल का जन्म 1857 में हुआ और मृत्यु 1939 में हुई। वह फ्रांसीसी समाजशास्त्री तथा नृजातिशास्त्री और दुर्खाइम का सहयोगी था। उसकी सुप्रसिद्ध पुस्तकों में *हाउ नेटिव्स थिंक* (1926) और *प्रिमिटिव मेंटलिटी* (1923) शामिल हैं। इन दोनों पुस्तकों का फ्रेंच भाषा से अंग्रेजी में अनुवाद लिलियन ए. क्लेयन ने किया। फ्रेंच में ये पुस्तकें 1912-1922 में प्रकाशित हुईं। इन दोनों पुस्तकों में लेवी-ब्रुल ने उन तमाम मानव मूल्यों, आचार-व्यवहार तथा विश्वासों का विवेचन किया, जिन्हें समाज के सभी सदस्य मानते हैं और कालांतर में अगली पीढ़ी को सौंप देते हैं। उनकी यह दृढ़ मान्यता थी कि सरल समाज के लोगों की काल्पनिक मान्यताएं, विश्वास तथा अन्य विचार उनकी सामाजिक संरचना पर प्रकाश डालते हैं। उसका कहना था कि एक समूह के विचार दूसरे समूह के विचारों से भिन्न होते हैं। उसने यह भी सिद्ध किया कि किस प्रकार ये विचार तार्किक सिद्धांतों के रूप में प्रस्तुत किए जा सकते हैं। उसका मत था कि सरल समाज की आध्यात्मिक पृष्ठभूमि आधुनिक समाज जैसी नहीं थी। वह सरल समाज समुदायों में पाई जाने वाली विचार-संरचना को पूर्व-तार्किक (pre-logical) मानते थे क्योंकि उनके मतानुसार आदिवासी स्वाभाविक कार्य-कारण संबंध को नहीं समझ पाते हैं। यह समझना आवश्यक है कि लेवी-ब्रुल ने सामाजिक कार्यकलापों से जुड़े विचारों के अध्ययन पर अपना ध्यान केन्द्रित किया, जबकि दुर्खाइम ने केवल सामाजिक कार्यकलापों का अध्ययन किया।

4.3.1 ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों में खेती-बाड़ी का प्रचलन

ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों का भरण-पोषण मुख्य रूप से खेतों की उपज से होता है। वे मछली पकड़ने काम करते हैं और अपने यहां तैयार किए गए माल का व्यापार करते हैं। खेती-बाड़ी में जमीन खोदने के लिए वे नोकदार लकड़ी के डंडे और छोटी कुदाली जैसे औजारों का इस्तेमाल करते है। इनके द्वारा वे इतनी खेती कर लेते हैं कि उनकी सारी जनसंख्या खा-पी सके। वे अपनी जरूरत से ज्यादा उपज भी पैदा कर लेते हैं। विभिन्न प्रकार की मिट्टी, पौधों और उनकी अन्योन्यक्रिया के व्यापक ज्ञान के कारण उन्हें खेती में खूब सफलता मिली है। इसके साथ ही, वे बहुत मेहनती हैं और उन्हें खेती के लिए सही स्थान और समय की भी जानकारी है। वे अपने ज्ञान का इस्तेमाल मिट्टी और पौधों के चयन के लिए करते हैं। यह ज्ञान उन्होंने पर्यवेक्षण और अनुभव के द्वारा प्राप्त किया है। उनमें जमीन को साफ करने, झाड़ियों को जलाने, पौधे लगाने, खर-पतवार निकालने और रतालू की बेलों को ऊपर व्यवस्थित करके रखने में खूब मेहनत करने और सही समय और स्थान पर अपने श्रम को लगाने की आवश्यक योग्यता है। मौसम ऋतुओं, विभिन्न प्रकार के पौधों और कीटों (pests) के अच्छे आवश्यक ज्ञान के साथ ही उन्हें उस ज्ञान पर पूरा भरोसा भी होना चाहिए। तभी वे सफलतापूर्वक और समय के नियत अंतराल पर खेती-बाड़ी का काम कर सकते हैं। इन सारे प्रमाणों के आधार पर मलिनॉस्की ने यह दिखाने का प्रयास किया कि आदिवासियों का अपने आसपास के वातावरण के प्रति दृष्टिकोण तके पर आधारित होता हैं। यही कारण है कि वे अपने और आश्रितों के भरण-पोषण के लिए पर्याप्त तथा अतिरिक्त उपज भी पैदा कर सकते हैं।

इस प्रकार, अपनी बात का प्रमाण देने के बाद मलिनॉस्की ने खेती-बाड़ी के व्यावहारिक कार्यों और खेती-बाड़ी से जुड़े वार्षिक अनुष्ठानों के बीच घनिष्ठ संबंधों के बारे में चर्चा की। यहां उन्होंने चेतावनी देते हुए कहा कि ये एक-दूसरे के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध तो हो सकते हैं, लेकिन वे एक-दूसरे के पर्यायवाची नहीं है। वे दोनों एक रूप नहीं हैं, क्योंकि उनके परिणामों को आदिवासी स्पष्ट रूप से अलग करके देखते हैं। उनके लिए खेती-बाड़ी

करने के लिए जादू-टोने के वार्षिक अनुष्ठानों को करना नितांत आवश्यक है और कई दशाब्दियों के यूरोपीय प्रभाव के बावजूद ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों ने अपने परंपरागत आचरण को नहीं बदला है। इंग्लैंड के ग्रैनेडा टेलिविजन (जी.डी. 1990: 8) ने इस बात की पुष्टि की है कि 1989 में रतालू (yam) की खेती से संबंधित बहुत-से अनुष्ठान आज भी लगभग वैसे ही हैं जैसे कि मलिनॉस्की ने 1915 में देखे थे। ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों की यह धारणा है कि यदि वे इन जादू-टोने वाले अनुष्ठानों की उपेक्षा करेंगे तो उनकी खेती को अंगमारी (blight), सूखा, बाढ़, हानिकारक कीटों और जंगली जानवरों आदि की समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। मलिनॉस्की का मत है कि अपनी खेती की सुरक्षा के लिए जादू-टोने के अनुष्ठानों को करने का यह अभिप्राय नहीं है कि ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासी खेती की सफलता का पूरा श्रेय जादू-टोने को देते हैं। उनके अनुसार "यदि आप किसी द्वीपवासी को ऐसा सुझा दे कि वह अपनी खेती को जादू-टोने के भरोसे छोड़ दे और खेती-बाड़ी में लापरवाही बरते तो वह आपकी सरलता पर मुस्कुरा देगा। इस बात को वह जानता है और आपको भी मालूम है कि कुछ ऐसी प्राकृतिक स्थितियां और कारण होते हैं, जिन्हें वह अपने पर्यवेक्षण से जानता है कि इन प्राकृतिक शक्तियों को वह मानसिक युक्तियों और शारीरिक प्रयास से नियंत्रित कर सकता है। इसमें संदेह नहीं कि उसका ज्ञान सीमित है लेकिन उसे जो भी ज्ञान है वह पक्का ज्ञान है और उसमें कोई रहस्यात्मकता नहीं है। अगर खेत की बाड़ टूट जाए, सूख जाए या बह जाए तो वह जादू-टोने के बजाय समस्या सुलझाने के लिए वे सारे जरूरी उपाय करेगा जो उसके पूर्व ज्ञान और तर्क पर आधारित होंगे।"

निष्कर्षतः मलिनॉस्की ने लिखा है कि सारे द्वीपवासी जानते हैं कि कभी-कभी कड़ी मेहनत के बावजूद भी उनकी फसल खराब हो जाती है। कभी-कभी ठीक समय पर वर्षा नहीं होती या धूप नहीं निकलती या टिड्डी दल फसल को खा जाता है। इस प्रकार के हानिकारक प्रभावों को रोकने के लिए ट्रॉबिएंड द्वीपवासी जादू-टोने का आश्रय लेते हैं। दूसरे शब्दों में ऐसा कहा जा सकता है कि जहां एक ओर मौसम, मिट्टी, पौधा, कीटों, बुआई, खर-पतवार को निकालने और बाढ़ आदि ज्ञात स्थितियों को द्वीपवासी अपने वातावरण के तार्किक ज्ञान के आधार पर नियंत्रित करते हैं वहीं दूसरी ओर, वे अज्ञात या असमय समस्या पैदा हो जाने वाली स्थितियों पर नियंत्रण करने के लिए जादू-टोने का सहारा लेते हैं।

इसके अलावा, मलिनॉस्की ने यह भी बताया कि वे कामकाज के क्षेत्र को अनुष्ठान के क्षेत्र से अलग रखते हैं। खेती-बाड़ी से संबंधित हर जादू-टोने के अनुष्ठान के लिए एक अलग विशेष नाम हैं। उसे करने का समय और स्थान स्पष्ट रूप से निर्धारित होता है और वह खेती-बाड़ी के रोजमर्रा के कार्य की योजना से अलग होता है। जादू-टोने के अनुष्ठान के समय खेती-बाडी के काम काज पर रोक लगी रहती है। जादू-टोने के सभी अनुष्ठान लोगों की पूरी जानकारी में होते है और उनमें प्रायः सभी लोग शामिल होते हैं।

दूसरी बात यह है कि जो ओझा जादू-टोने के अनुष्ठान कराता है, वही कृषि संबंधी कार्य भी करता है, उसकी दोनों भूमिकाएं पूरी तरह अलग-अलग रहती हैं। वे परस्पर एक-दूसरे को अधिव्याप्त नहीं करती और न ही उन्हें एक-दूसरे के क्षेत्र में दखल देने दिया जाता है। खेती-बाडी के क्रियाकलापों के अगुआ की भूमिका में वह खेती-बाड़ी का काम शुरू करने की तारीख निर्धारित करता है। वह सुस्त और लापरवाह किसान को डांटता है। लेकिन वह कभी भी इस भूमिका को ओझा की भूमिका में मिलाता नहीं है। खेती-बाड़ी की इस चर्चा के बाद अब हमने केनो-निर्माण से संबंधित उदाहरण को लिया है।

4.3.2 ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों द्वारा केनो-निर्माण

केनो एक लंबी, हल्की और संकरी नाव होती है, जिसके दोनों सिरे नुकीले होते हैं। इसके दोनों पार्श्व (sides) अंदर की ओर मुड़े होते हैं। इसे सामान्य रूप से हस्तचालित पैडलों से चलाया जाता है। ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासी केनो बनाते समय केनो-निर्माण के क्रियाकलापों को जादू-टोने से संबंधित क्रिया-व्यापारों से अलग रखते हैं। केनो के निर्माण में उसके निर्माताओं को उसकी लकड़ी के टिकाऊपन और द्रव गतिकी (hydro-dynamics) के सिद्धांत को पूरी जानकारी होनी चाहिए। इसके अलावा, उन्हें यह भी मालूम होता है कि पानी में संतुलन बनाए रखने के लिए पार्श्व वर्ध (outrigger) की विस्तृति (पाद) को चौड़ा करना चाहिए। वे यह भी जानते हैं कि ऐसा करने से तनाव के विरुद्ध कम प्रतिरोध होगा। केनो की चौड़ाई इतनी क्यों रखी है इसका कारण भी वे बता सकते हैं। यह वे केनो की लंबाई के अनुपात द्वारा बता सकते हैं। वे नौका निर्माण की पूरी रचना प्रक्रिया (यांत्रिकी) से अच्छी तरह से परिचित है। तूफान आने पर क्या करना चाहिए और उन्हें क्यों पार्श्व वर्ध (outrigger) को हवा के रुख की ओर रखना चाहिए -इसे जानते हैं। मलिनॉस्की (1948: 30) ने हमें बताया है कि ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों के पास नौचालन से संबंधित शब्दावली का प्रचुर भण्डार है और वह उतना ही जटिल है जितना आजकल के नौचालक इस्तेमाल करते हैं। ऐसा होना आवश्यक भी है क्योंकि यदि ऐसा न हो तो वे अपनी हल्की कमज़ोर नौका में समुद्र की भयावह स्थितियों का सामना नहीं कर सकते।

रतालू की खेती की भांति ही केनो-निर्माण से संबंधित क्रियाकलापों से यह पता चलता है कि उन्हें सफलतापूर्वक नौचालन की भी वैसी ही अच्छी जानकारी है। परंतु यहां भी मलिनॉस्की ने इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट किया कि ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों को आकस्मिक झंझावात और शक्तिशाली लहरों जैसी बेशुमार स्थितियों का सामना करना पड़ता है और ऐसी स्थिति में उन्हें जादू-टोने की जरूरत होती है। जादू-टोने के अनुष्ठानों का आयोजन केनो-निर्माण के समय तथा समुद्री अभियान के प्रारंभ में और उसके दौरान किया जाता है। ट्रॉबिएड द्वीपवासियों की आधुनिक नाविकों से तुलना करते हुए मलिनॉस्की (1948: 30) ने लिखा,

यदि आधुनिक नाविक, जिसे विज्ञान और तर्क की अच्छी समझ है और जिसके पास सभी तरह के सुरक्षा के उपाय है, यानी जो स्टील के स्टीमरों में नौचालन करता है. और तब भी अंधविश्वासों को मानता है, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है कि उसके वहशी (savage) साथी उससे भी कहीं अधिक कठिन परिस्थितियों में अपनी सुरक्षा के लिए जादू-टोने का सहारा लेते हों?

इससे आपको स्पष्ट हो चुका होगा कि मलिनॉस्की ने (i) परिस्थितियों के प्रति तर्कपरक दृष्टिकोण, और (ii) प्रकृति की रहस्यमय और अदृश्य शक्तियों के नियंत्रण के लिए जादू-टोने के अनुष्ठान — दोनों को मान्यता प्रदान की है। उसने अपने निंबध 'जादू-टोना, विज्ञान भार धर्म' में मछली पकड़ने, युद्ध, स्वास्थ्य और मृत्यु आदि से संबंधित क्रियाकलापों के अन्य उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। इनमें से प्रत्येक में उसने यह दिखाने का प्रयास किया कि आदिम लोग व्यवस्थित रूप से पर्यवेक्षण करते हैं और उनके पास तर्क पर आधारित ज्ञान होता है। उसने द्वीपवासियों की इस योग्यता का भी उल्लेख किया है कि वे रेत या मिट्टी में आरेख-युक्त नक्शे बना सकत है। इससे पता चलता है कि उनमें ज्ञान को सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने की भी समझ है। उदाहरणार्थ उन्हें विभिन्न ऋतुओं की जानकारी होती है। वे तारों की गति और चंद्र पंचांग (lunar calendar) से परिचित हैं और इनके आधार पर समुद्री अभियान या युद्ध की योजना बनाते हैं। इसके अलावा, अपनी योजनाओं को समझाने के

लिए आरेख भी बना सकते हैं। अगले अनुभाग में यह चर्चा होगी कि इन उदाहरणों से क्या निष्कर्ष निकलता है। परंतु उससे पहले आप बोध प्रश्न 2 हल कीजिए।

बोध प्रश्न 2

i) ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासी दैनिक कामकाज के क्षेत्र को अनुष्ठान के क्षेत्र से अलग क्यों रखते है?

.....

.....

.....

.....

.....

ii) क्या अपने वातावरण के प्रति तर्कसंगत दृष्टिकोण का मतलब यह है कि ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों में जादू-टोने के प्रति विश्वास का अभाव है? इसके पक्ष अथवा विपक्ष में, अपना उत्तर लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

4.3.3 क्या परंपरागत ज्ञान विज्ञान के समान था?

मलिनॉस्की ने एक प्रश्न कियाः जो अनुभव पर आधारित और तर्कपरक आदिम ज्ञान को क्या विज्ञान की प्रारंभिक अवस्था कहा जा सकता है या यह विज्ञान से बिल्कुल भी संबंधित नहीं है? इस प्रश्न का उसने सीधा उत्तर यह दिया कि अगर हम विज्ञान को अनुभव और तर्क पर आधारित व्यवस्था मानें तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि सरल समाज में लोगों के पास विज्ञान का प्रारंभिक ज्ञान था।

दूसरे, यदि हम विज्ञान को एक मानसिक अभिवृत्ति (mental attitude) के रूप में देखें तो इस बारे में मलिनॉस्की का कहना है कि परंपरागत लोगों की अभिवृत्ति पूर्णतया अवैज्ञानिक नहीं है। यह हो सकता है कि उनमें ज्ञान प्राप्त करने की तीव्र अभिरूचि न हो। यह भी हो सकता है कि जिन विषयों में यूरोप के लोगों को गहरी दिलचस्पी हो उन्हें वे नीरस समझते हों। इसका कारण यह है कि किसी की रूचि का निर्धारण उसकी सांस्कृतिक परंपराओं से होता है। उनकी अपने आसपास के वातावरण से संबंधित प्राणियों के जीवन, समुद्री जीवन और वनों आदि में गहरी दिलचस्पी है। मलिनॉस्की अपने इस निबंध में परंपरागत ज्ञान की प्रकृति और उसके आधार से संबंधित प्रश्नों को अलग रखा। वस्तुतः उसकी रुचि इस बात को जानने में अधिक है कि क्या आदिम लोगों के जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र है, जहां जादू-टोना, विज्ञान और धर्म एक रूप हों, या वे इन तीनों पक्षों को सामाजिक जीवन के अलग-अलग क्षेत्र मानते हों। उसने यह दिखाने का प्रयास किया है कि ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों के लिए व्यावहारिक क्रियाकलापों और तर्कपरक अभिवृत्तियों के क्षेत्र का एक दायरा है। उसने यह भी बताया कि उनकी यह दुनिया जादू-टोने और धार्मिक क्रियाकलापों की दुनिया से अलग है। आइए, अब इस दूसरे क्षेत्र अर्थात् पवित्र क्षेत्र के बारे में विचार करें, जिसमें धर्म आर जादू-टोना दोनों शामिल हैं।

सोचिए और करिए 1

अपने रोजमर्रा के जीवन से कुछ ऐसे उदाहरण दीजिए, जिनमें हम जादू-टोने और धार्मिक आचार-व्यवहार दोनों का आश्रय लेते हों। चार पृष्ठों की एक टिप्पणी लिखिए।

4.4 पवित्र क्षेत्र-धर्म

अपने निबंध के इस भाग में मलिनॉस्की (1948: 36) ने निम्नलिखित बातों पर विचार किया है।

i) तथ्यों को तरतीबवार करना (अब तक आपको यह बात मालूम हो गई होगी कि मलिनॉस्की के लिए यह हमेशा सबसे महत्वपूर्ण काम रहा है),

ii) पवित्र क्षेत्र की विशेषता का सही तरीके से निर्धारण और इसको लौकिक से अलग करना,

iii) जादू-टोने और धर्म के बीच संबंध को बताना।

उसने अंतिम बात से शुरू करते हुए बताया कि जादू-टोने और धर्म के बीच एक स्पष्ट अंतर यह है कि जादू-टोने के अनुष्ठानों का एक स्पष्ट उद्देश्य होता है और आगे आने वाली घटनाओं से उसके परिणाम का पता लगता है। धार्मिक अनुष्ठानों में विशिष्ट प्रयोजन और घटना की दृष्टि से परिणाम का पूर्व विचार नहीं देखने को मिलता। मलिनॉस्की ने आदिम लोगों में धार्मिक विश्वासों और व्यवहारों की प्रकृति के संबंध में जो चर्चा की है, वह इसी मुख्य अंतर पर आधारित है (आगे चलकर आपको धर्म और जादू-टोने के बीच समानताओं और असमानताओं के बारे में और जानकारी भी मिलेगी)। उसने धर्म के क्षेत्र को स्पष्ट करने के लिए लेख में आदिम लोगों में दीक्षा समारोहों का उदाहरण दिया है। दीक्षा समारोहों की प्रकृति, धार्मिक व्यवहार और इसके प्रकार्य की व्याख्या की है। मलिनॉस्की के धर्म पर विचार को समझने के लिए आइए हम इस विशिष्ट उदाहरण के बारे में विस्तार से चर्चा करें।

4.4.1 दीक्षा अनुष्ठान समारोह

दीक्षा अनुष्ठान के नीचे दिये गए कुछ सामान्य अभिलक्षण (features) मलिनॉस्की (1948: 38) ने दिए हैं।

i) दीक्षा पाने वाले व्यक्तियों को कुछ समय के लिए अकेले रहने पड़ता है। इस अवधि में वे अपने आपको अनुष्ठान के लिए तैयार करते हैं।

ii) दीक्षा अनुष्ठान के दौरान युवकों कई कठिन परीक्षाओं में से गुजरना पड़ता है। इनमें अंग-भंग भी शामिल है। कभी-कभी यह केवल दिखावा मात्र होता है, वास्तव में अंग-भंग नहीं किया जाता।

iii) इन कठिन परीक्षाओं का मतलब प्रतीकात्मक रूप में अनुष्ठानिक मृत्यु है और इसके बाद दीक्षा प्राप्त व्यक्ति का एक तरह से पुनर्जन्म होता है।

iv) ये अभिलक्षण अनुष्ठानों के नाटकीय पक्ष का प्रतिनिधित्व करते है। इसमें पवित्र मिथकों (पुराण कथा) और परंपरा की व्यवस्थित शिक्षा मिलती है जिसमें जनजातीय रहस्यों का परदा क्रमशः उठाया जाता है। इस तरह. दीक्षित व्यक्तियों का परिचय पवित्र वस्तुओं से होता है।

v) इन अनुष्ठानों के दौरान कठिन परीक्षा और शिक्षा के कार्य पुरखों या सांस्कृतिक पुरोहितों अथवा अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति के तत्वाधान में सम्पन्न कराए जाते है।

मलिनॉस्की ने धर्म, जादू, विज्ञान के बारे में जो प्रश्न बार-बार किए वे उनके समाजशास्त्राय महत्व के बारे में थे।

यहां वह फिर प्रश्न करता है कि आदिम संस्कृति को बनाए रखने में और उसके विकास में दीक्षा अनुष्ठान का क्या योगदान होता है? मलिनॉस्की के अनुसार, दीक्षा अनुष्ठानों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इनमें युवकों को शारीरिक कष्ट की स्थिति में पवित्र परपरा की सीख दी जाती है। ये अनुष्ठान महती शक्तियों के निरीक्षण में किये जाते हैं। स्पष्ट है कि अपने पुराने रीति-रिवाजों, परंपराओं में निहित ज्ञान की रक्षा ही इन अनुष्ठानों का उद्देश्य है। अनुष्ठानों के इस पक्ष पर ज़ोर देते हुए मलिनॉस्की (1948: 39) ने दीक्षा समारोह के निम्नलिखित प्रकार्यों का उल्लेख किया है।

i) वे अलौकिक शक्ति और आदिम जातियों की परंपराओं के मूल्य को अनुष्ठानिक और नाटकीय अभिव्यक्ति देते हैं।

ii) वे अलौकिक शक्ति और परंपराओं के मूल्यों की महत्ता को प्रत्येक पीढ़ी के लोगों को हदयंगम करवाते हैं।

iii) वे जनजातीय लोक कथाओं को अगली पीढ़ी तक पहुंचाते हैं और इस तरह परंपरा को सुरक्षित रखते हैं। फलतः जनजातीय एकत्व बना रहता है।

इन संस्कारों के उपर्युक्त प्रकार्यो को बताने के साथ मलिनॉस्की एक अन्य पक्ष पर ज़ोर देता है। यह है--दीक्षित नवयुवकों का एक स्थिति से दूसरी स्थिति में प्रवेश करना। दीक्षा समारोह ऐसे व्यक्तियों के लिए एक प्राकृतिक और जैविक घटना है अर्थात् वह उनके शारीरिक विकास की ओर संकेत करता है। शारीरिक ही नहीं, ये समारोह सामाजिक परिवर्तन के महत्व को भी प्रकट करते है। शारीरिक विकास की दृष्टि से दीक्षित युवक पुरुषत्व में प्रवेश करते हैं जिस अवस्था के साथ उन्हें कुछ कर्तव्य, अधिकार और पवित्र परंपराओं का ज्ञान हासिल होता है। ये समारोह उन्हें ऐसा अवसर प्रदान करते हैं जब वे पवित्र वस्तुओं और व्यक्तियों के संपर्क में आते हैं मलिनॉस्की (1948: 40) इन धार्मिक संस्कारों में सृजनात्मकता को देखता है। दीक्षित युवकों के शारीरिक से सामाजिक और फिर आध्यात्मिक क्षेत्र परिवर्तन की प्रक्रिया में यह सृजनशीलता अभिव्यक्त होती है।

मलिनॉस्की के अनुसार दीक्षा अनुष्ठानों के मुख्य अभिलक्षणों और प्रकार्यों के बारे में उपरोक्त चर्चा से पता चलता है कि दीक्षा अनुष्ठान पूर्णतया धार्मिक कार्य है और इस संस्कार में ही इसका प्रयोजन भी निहित है। व्यापक परिप्रेक्ष्य में इस संस्कार का प्रकार्य उन मानसिकवृत्तियों और सामाजिक व्यवहारों का सृजन है, जिनका उस समूह के लोगों और उनकी सभ्यता के लिए अत्यधिक महत्व है। धर्म पर मलिनॉस्की के विचारों को जानने के लिए, आइए, हम एक और उदाहरण लें।

4.4.2 मृत्यु से संबंधित अनुष्ठान

मलिनॉस्की के अनुसार जीवन की अंतिम घटना मृत्यु भी धर्म का स्रोत है। मलिनॉस्की के विचार में मृत्यु संबंधी अनुष्ठान पूरे विश्व में एक से ही होते हैं। सभी जगह ऐसा देखने में आता है कि जैसे-जैसे मृत्यु का समय पास आता है, उस व्यक्ति के निकट संबंधी, कभी-कभी तो उसके समुदाय या जाति के सभी लोग उसके यहां जमा हो जाते हैं। इस प्रकार, व्यक्ति के जीवन की नितांत निजी घटना एक सामाजिक घटना बन जाती है। इसकी पूरी श्रृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया होती है। कुछ व्यक्ति मृत व्यक्ति के आसपास रहते हैं, जबकि अन्य लोग मृतक के अंतिम संस्कार की तैयारी में जुट जाते हैं। मलेनेशिया के कुछ भागों में विवाह-जन्य रिश्तेदार (affines) ही मृतक का संस्कार कराते हैं और मृतक के अपने

नातेदार दूर रहते हैं। यह बड़ी दिलचस्प बात है कि कुछ ऑस्ट्रेलियाई जन-जातियों में इससे बिल्कुल उलटा होता है।

मृत्यु के बाद तत्काल मृतक को नहलाकर, तेल आदि लगाकर और सजाकर लोगों के दर्शन के लिए उसे रख दिया जाता है। इसके बाद शोक की शुरुआत नाटकीय ढंग से दुख भरे विलाप और चीखने-चिल्लाने से होती है। शोक प्रकट करने के लिए कहीं सिर मुंड़ाया जाता है तो कहीं लोग अपने बालों को अस्त-व्यस्त कर लेते हैं और कपड़े फाड़ लेते हैं। इसके बाद मृतक के शव के अंतिम संस्कार का समय आता है। मृतक के शव को खुली या बंद कब्र में दफना दिया जाता है या शव को किसी गुफा में थड़े (प्लेटफॉर्म) पर रख दिया जाता है अथवा किसी पेड़ के खोखले में या सुनसान स्थान पर खुले में छोड़ दिया जाता है। इसके अलावा, कहीं-कहीं शव को जलाया जाता है या खुली नाव में बहने दिया जाता है।

मलिनॉस्की ने बताया कि आदिम समुदायों में परस्पर विरोधी रीति-रिवाज हैं। कहीं शव को या उसके कुछ अंगों को परिरक्षित (preserve) किया जाता है और कहीं उसे पूरी तरह समाप्त कर दिया जाता है। एक ओर शव परिरक्षित करने के लिए ममी के रूप में रखना तो दूसरी ओर उसे जलाकर समाप्त करना - अंतिम संस्कार के दो परस्पर विरोधी उदाहरण हैं। मलिनॉस्की इस बात से सहमत नहीं है कि ऐसा विभिन्न क्षेत्रों में फैली सांस्कृतिक विशेषताओं के बीच संपर्क के कारण है। इसके विपरीत, उसका मत है कि ये रीति-रिवाज आदिवासियों की दो तरह की मानसिक अभिवृत्तियों के सूचक हैं। एक तो मृत व्यक्ति के प्रति लगाव की अभिवृति है और दूसरी उसकी मृत्यु के बाद होने वाले शरीर-क्षय से भय और जुगुप्सा या घृणा की अभिवृति है। मृतक के साथ पूर्ववत् संपर्क बनाए रखने की तीव्र इच्छा और दूसरी ओर इस संपर्क को समाप्त करने की समानांतर इच्छा - इन दोनों ही इच्छाओं की अभिव्यक्ति मृत्यु संबंधी संस्कारों में देखने को मिलती है। इसी वजह से मलिनॉस्की ने इन्हें धर्म के क्षेत्र में शामिल किया है। याद रखें कि हमने इस इकाई के आरंभ में कहा था कि जब संस्कार सम्पन्न करने की प्रक्रियाओं में ही उसका प्रयोजन भी निहित हो तो उसे धार्मिक व्यवहार का उदाहरण माना जा सकता है। ठीक यही बात मृत्यु से संबंधित अनुष्ठानों में होती है। उदाहरणार्थ, मृत व्यक्ति के शव के साथ संपर्क को प्रदूषणकारी और खतरनाक समझा जाता है। जो लोग शोक संबंधी कार्यक्रम में भाग लेते हैं, उन्हें नहाना और अपने आपको स्वच्छ करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, मृत्यु संबंधी संस्कारों के द्वारा शोकाकुल व्यक्ति जुगुप्सा या घृणा के अपने भाव पर विजय पाते हैं और डर को दूर भगाते हैं। मृत्यु की घटना से उत्पन्न भय पर विजय पाने की चर्चा हमें दूसरे पक्ष की ओर ले जाती है।

भावी जीवन या मृत्यु के बाद के जीवन पर लोगों के विश्वास के द्वारा घृणा या जुगुप्सा के भाव पर विजय पाने और भय को हटाने में मदद मिलती है। इससे आत्मा की निरंतरता और अमरत्व की धारणा में विश्वास का संकेत मिलता है। मलिनॉस्की के अनुसार, आत्मा के अस्तित्व में विश्वास या अमरता का विचार गंभीर मनोभावात्मक आत्मदृष्टि का परिणाम है। मलिनॉस्की ने इसे आदिम दार्शनिक सिद्धांत के बजाय धर्म में माना है। उसके विचारानुसार आत्मा की अमरता में विश्वास से मनुष्य को मृत्यु पर विजय पाने में मदद मिलती है।

यहां हम देखते हैं कि मलिनॉस्की मृत्यु से संबंधित अनुष्ठान के प्रमुख अभिलक्षण को सामने लाया है। मृत्यु के तत्काल पश्चात् किए जाने वाले अनुष्ठानों और आत्मा की अमरता में विश्वास से दोनों पक्षों की महत्ता दिखाई देती है। एक ओर पूरे समूह को होने वाली क्षति और दूसरी ओर मृत्यु के बाद भी आत्मा के जीवित रहने की भावना का पता चलता है। इस प्रकार, एक प्राकृतिक घटना या जैविक तथ्य का एक सामाजिक घटना के रूप में विशेष महत्व हो जाता है।

बोध प्रश्न 3

i) सरल समाज के लोगों में दीक्षा समारोह का मुख्य उद्देश्य लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

ii) ऐसी बात क्या है जो व्यक्ति को मृत्यु के भय पर विजय पाने में सहायता करती है?

.....

.....

.....

.....

.....

4.4.3 धार्मिक आचरण के कुछ अन्य उदाहरण

धार्मिक संस्कारों के बारे में मलिनॉस्की द्वारा किए गए अन्य उदाहरणों में से एक उदाहरण विवाह संस्कार के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी के रूप में है। इससे उसे प्रजनन और पोषण की आवश्यकताओं के बारे में चर्चा का अवसर मिला। मलिनॉस्की के अनुसार, दीक्षा अनुष्ठान के समान विवाह संस्कार में भी विभिन्न अनुष्ठान जैविक तथ्यों से भी कहीं अधिक सामाजिक पक्ष को दिखाते हैं। वे पुरूष और महिला के जीवन भर के साहचर्य या मिलन को लक्षित करते हैं और प्रजनन तथा पोषण से संबंधित दीर्घकालीन क्रियाकलापों की ओर संकेत करते हैं।

मलिनॉस्की ने यह भी बताया है कि भोजन के बारे में आदिम लोगों में एक प्रकार का मनोभावात्मक तनाव पाया जाता है। आदिम संस्कृति के कृषि संबंधी चक्र में उपज के पहले अंश को चढ़ावे के रूप में देने, फसल की कटाई और मौसम संबंधी समारोहों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसी तरह, मछुआरों द्वारा बड़ी मछली पकड़ने या शिकारियों द्वारा बड़े जानवर का शिकार करने जैसी घटनाओं को महत्वपूर्ण माना जाता है। खाद्य सामग्री जुटाने की प्रक्रिया में व्यक्ति विशेष और उसके वातावरण के बीच महत्वपूर्ण संपर्क पैदा होता है। यही कारण है कि आदिम लोगों के धर्म में खाद्य सामग्री सांस्कृतिक और जैविक रूप में महत्वपूर्ण होने के साथ-साथ पवित्र भी मानी जाती है।

खाने की सामग्री को पवित्र मानने के विचार के आधार पर मलिनॉस्की ने बलि (देवता पर खाद्य सामग्री आदि मूल्यवान वस्तुएं चढ़ाने) तथा सहभोज (मिलकर भोजन करने) के बारे में नई दृष्टि से विचार किया। ऐसा पाया जाता है कि इन संस्कारों में अनुष्ठानिक रूप से भोजन खिलाया जाता है। इससे स्पष्ट है कि आदिवासियों में खूब अन्न पैदा होने के प्रति श्रद्धा का भाव होता है। यहां उसने मध्य आस्ट्रेलियाई जनजातियों में टोटमी विश्वासों से जुड़े हुए सांस्कारिक भोज का उदाहरण प्रस्तुत किया। इससे पूर्व भी उल्लेख किया जा चुका है कि जनजाति विशेष के लोग सीमित संख्या में जानवरों और/अथवा पौधों को अपने टोटम के रूप में चुन लेते हैं। मलिनॉस्की का कथन है कि आदिम लोगों को जीवन-यापन

के लिए विशिष्ट जाति के प्राणियों या पौधों की निंरतर उपलब्धि चाहिए। उन्हें इन चीजों की प्रचुर मात्रा में आपूर्ति के लिए इन चुनी हुई चीजों पर पूरा नियंत्रण भी चाहिए। इसीलिए उन्होंने इनकी आदतों और रहन-सहन का अध्ययन किया। इस तरह, उनमें इन वस्तुओं के प्रति आदरभाव की मनोवृत्ति का विकास हुआ। जीवन-यापन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने की प्रक्रिया का धीरे-धीरे स्वाभाविक फल यह हुआ कि आदिवासियों में कुछ चुने प्राणियों और पौधों से दिलचस्पी पैदा हो गई और इस रुचि का दैवीकरण टोटमी अनुष्ठानों के रूप में हमारे सामने आया। मलिनॉस्की ने पुनः टोटमी वस्तुओं से संबंधित विश्वासों की व्यवस्था में नैतिक मूल्यों और जैविक महत्व दोनों को स्वीकार किया है। आइए, अब हम धर्म पर मलिनॉस्की के विचारों का सार देने का प्रयास करें।

4.4.4 धर्म के बारे में मलिनॉस्की के विचारों का सारांश

मलिनॉस्की के मूल रूप से धार्मिक संस्कारों के प्रकार्यात्मक मूल्यों को प्रदर्शित किया। संक्षेप में, उन्होंने धार्मिक कृत्यों के मुख्य प्रकारों का सर्वेक्षण किया और यह निष्कर्ष निकाला कि धार्मिक कार्यों के मुख्य प्रकारों के निम्नलिखित प्रकार्य हैं।

i) दीक्षा संबंधी अनुष्ठान परंपरागत ज्ञान को धार्मिक रूप प्रदान करते हैं।

ii) आदिम समाज में व्यक्ति की मष्त्य होने पर कछ धार्मिक अनुष्ठान किए जाते हैं जो भय और विनाश की शक्तियों को क्षीण कर देते हैं।

iii) आहार, बलिदान और टोटमी विश्वासों से संबंधित अनुष्ठान लोगों को आहार या पोषण प्रदान करने वाली शक्तियों के प्रत्यक्ष संपर्क में लाते हैं।

मलिनॉस्की ने अपने विचारों की पुष्टि में स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करने की पद्धति का सहारा लिया है। उसने अपने उदाहरण ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों के यहां से प्राप्त सामग्री से लिए हैं। उसके अनुसार, सभी धार्मिक अनुष्ठानों का एक सामाजिक पक्ष भी होता है जिसके बिना उनका अस्तित्व ही संभव नहीं है। किसी भी धार्मिक संस्कार में सामाजिक पक्ष आवश्यक है। परंतु इतना भर पयाप्त नहीं है। उसने इस बात पर ज़ोर दिया कि व्यक्ति के मन का विश्लेषण किए बिना धर्म को नहीं समझा जा सकता है। यही कारण है कि वह धार्मिक संस्कार या अनुष्ठान के प्रत्येक स्तर पर व्यक्ति की मानसिक दशा की ओर ध्यान दिलाता है। इसके साथ ही वह धार्मिक आचरण की व्याख्या जादू-टोने के साथ तुलना करके और उससे विरोध बताते हुए करता है। इसलिए यह आवश्यक है कि अब हम जादू-टोने से संबंधित मलिनॉस्की के विचारों की जानकारी प्राप्त करें। परंतु इस जानकारी को लेने से पहले सोचिए और करिए 3 को पूरा करें ताकि आपको मलिनॉस्की के धर्म से जुड़े विचारों को आत्मसात करने में सहायता मिले।

सोचिए और करिए 2

व्यक्तिजन्य आवश्यकताओं के विशिष्ट संदर्भ में धर्म संबंधी मलिनॉस्की के विचारों के बारे में तीन पृष्ठों की टिप्पणी लिखिए।

4.5 पवित्र क्षेत्र - जादू.टोना

हमने संक्षेप में इस बात का उल्लेख किया था कि किस प्रकार मलिनॉस्की जादू-टोने को विज्ञान से और धर्म से अलग करता है। मलिनॉस्की ने जादू-टोने का व्यावहारिक कार्यों के रूप में वर्णन किया है, जिसका उपयोग मनचाहा परिणाम प्राप्त करने के लिए किया जाता है। कई प्रकार के जादू-टोनों में से मलिनॉस्की ने विशेष उल्लेख के लिए (i) काले जादू

(ब्लैक मैजिक) और प्रेम का जादू (लव मैजिक) (ii) अनुकरण करने वाले और भविष्यवाणी करने वाले जादू, और (iii) सरल जादू को चुना।

i) काले जादू (ब्लैक मैजिक) में किसी नुकीली चीज (जैसे हड्डी या छड़ी, बाण या किसी जानवर की रीढ़ की हड्डी) को उस व्यक्ति की ओर निर्दिष्ट किया जाता है, जिसके विरुद्ध जादू किया जा रहा है। यह अनुकरणात्मक ढंग से अपने काल्पनिक शिकार को लक्ष्य करके किया जाता है। ऐसे अनुष्ठान को करते समय नाटकीय ढंग से भावावेगों की अभिव्यक्ति की जाती है। जादू-टोने का अनुष्ठान कराने वाला ओझा अनुष्ठान करते समय वास्तविक घटना की नकल करता हुआ प्रतीक के रूप में स्थापित मारे जाने वाले व्यक्ति की आकृति या वस्तु को नष्ट कर देता है। इस अनुष्ठान में उस व्यक्ति के विरुद्ध घृणा और क्रोध की तीव्र अभिव्यक्ति की जाती है।

   लव मैजिक (प्रेम का जादू) काले जादू का उलटा है। इस जादू में जादूगर प्रेमी के रूप में बनी वस्तु को सहलाता और दुलारता है। इसमें प्रेमग्रस्त व्यक्ति के व्यवहार की नकल ही जाती है। ये सभी जादू-टोने की क्रियाएं चाहे वह ब्लैक मैजिक (मारण मंत्र) हो, प्रेम का जादू हो या आतंक अथवा दहशत पैदा करने वाला जादू हो, सभी मूलतः भावावेष की अभिव्यक्ति के सूचक हैं। इन अनुष्ठानों में प्रयुक्त होने वाली सभी वस्तुएं, क्रियाकलाप और भावावेष द्वारा एक-दूसरे से जुड़े होते हैं।

ii) दूसरे प्रकार के जादू में मनचाहे परिणाम की नकल की जाती है। उदाहरण के तौर पर, यदि हमारे अनुष्ठान का उद्देश्य किसी व्यक्ति को मारना है तो अनुष्ठान कराने वाला व्यक्ति धीरे-धीरे आवाज को मंद करेगा, मृत्यु के समय की घरघराहट करेगा और मृत्यु के समय के कंपन का अनुकरण करते हुए वह जमीन पर गिर पड़ेगा। (देखें मलिनॉस्की 1948:72)

iii) तात्कालिक परिणाम के लिए जादू-टोने की कुछ सरल प्रक्रियाएं की जाती हैं। सामान्य रूप से जादूगर किसी ऐसी वस्तु पर जाद का प्रभाव डालता है, जिसे बाद में वह व्याक्त उपयोग में लाए, जिस पर नियंत्रण करना हो। वह वस्तु जिस पर जादू का असर डाला जाता है, उपयुक्त और पूर्व-निर्धारित ढंग की होनी चाहिए।

इस प्रकार, इन सामान्य जादूओं को बताने के बाद मलिनॉस्की इस बात की ओर संकेत करता है कि इन सभी प्रकार के जादू-टोने का सामान्य अभिलक्षण जादू का बल (force) है, जो जादूई अनुष्ठान में निहित बल-प्रभाव की ओर संकेत करता है। जादू के रहस्यों को केवल जादू करने वाला ही जानता है, जिसका काम यह है कि वह इस क्षेत्र में ज्ञान की परंपरा को सुरक्षित रखे।

4.5.1 जादू-टोने की परंपरा

जादुई मंत्र-तंत्र अनुष्ठानिक उच्चारण में निहित होते हैं। और ये एक पीढ़ी के जादूगरों को परंपरा से प्राप्त होते हैं। मलिनॉस्की ने जादू-टोने या मंत्र-तंत्र से संबंधित तीन तत्वों का वर्णन किया है।

i) इनमें पहला तत्व ध्वन्यात्मक प्रभाव के रूप में है, जो विभिन्न प्राकृतिक ध्वनियों की नकल के परिणामस्वरूप सामने आता है। ये ध्वनियां हैं हवा की सीटी जैसी आवाज, गर्जन की आवाज और समुद्री लहरों का शोर आदि।

ii) दूसरा तत्व ऐसे शब्दों के उच्चारण के रूप में होता है, जो जादू विशेष के मनचाहे परिणाम की ओर संकेत करें। उदाहरण के तौर पर ब्लैक मैजिक में अनुष्ठान कराने

वाला उस रोग के लक्षणों के बारे में बात करता है, जिसके द्वारा शत्रु को मारा जाता है। इसी प्रकार, दूसरे को उपचार करने वाले जादू में जादूगर ऐसी दशा का वर्णन करेगा, जो अच्छे स्वास्थ्य से संबंधित हो।

iii) मलिनॉस्की के अनुसार, तीसरा तत्व हर प्रकार के मंत्र-तंत्र के सबसे महत्वपूर्ण पहलू की ओर ध्यान दिलाता है। इसमें जादू के बारे में मिथकीय संदर्भो का उल्लेख होता है जिसे पुरखों और सांस्कृतिक नायकों ने परंपरा से आगे बढ़ाया है। ऐसे मिथकीय संकेत जादू-टोने को पारंपरिक पृष्ठभूमि प्रदान करते हैं। मलिनॉस्की इस तत्व के बारे में और अधिक विस्तार से विचार करता है और वह परंपरा तथा जादुई अनुष्ठानों के बीच की कड़ी पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है।

प्रायः प्रत्येक जादू-टोने के अनुष्ठान के पीछे उसे उचित ठहराने वाली कोई न कोई कहानी होती है। उस कहानी में सामान्य रूप से यह वर्णन होता है कि कब और कहां वह जादू-टोने का अनुष्ठान किसी विशेष परिवार समूह या कुल के ओझा (जादू-टोने का अनुष्ठान कराने वाले) की संपत्ति बन गया। मलिनॉस्की ने सावधान करते हुए कहा कि इस प्रकार की कहानी से जादू-टोने के मूल या उद्‌गम के बारे में भ्रम नहीं होना चाहिए, क्योंकि ऐसा समझा जाता है कि सभी प्रकार के जादू-टोने का अस्तित्व सृष्टि के आरंभ से है। ऐसा कहा जा सकता है कि मनुष्य के अपने आसपास के वातावरण की नियंत्रित करने के तर्कपरक प्रयास के साथ ही जादू-टोने का अस्तित्व भी रहा है। मनुष्य के सामान्य तर्कपरक प्रयासों के असफल होने पर जादू-टोने या मंत्र-तंत्र का सहारा लिया जाता है। इस विषय में मलिनॉस्की मध्य आस्ट्रेलिया का उदाहरण देता है, जहां यह समझा जाता है कि जादू-टोने का अस्तित्व अनंत काल से वंश परंपरागत उत्तराधिकार में मिलता रहा है। मलेनेशिया में ऐसा माना जाता है कि जादू-टोने का प्रचलन उस समय से है, जब मानव गुफाओं में रहता था।

दूसरे, जादू-टोने का संबंध मुख्य रूप से मानव के कृषि, मछली पकड़ने, शिकार करने, व्यापार, बीमारी, मृत्यु, प्रेम संबंधों आदि सभी क्रियाकलापों से है। मलिनॉस्की ने यह भी बताया कि प्रायः जादू-टोने का प्रयोग मनुष्य के प्रकृति के साथ संबंधों के संदर्भ में या उन सभी क्रियाकलापों के लिए होता है जो इस संबंध को प्रभावित करते हैं। यों जादू-टोने का प्रयोग प्रकृति के प्रति नहीं होता और न ही इसे प्रकृतिजन्य माना जाता है। इसका उद्‌भव प्राकृतिक नियमों की जानकारी से भी नहीं होता। इसके विपरीत, यह परंपरा पर आधारित है और मानव की मनचाहा परिणाम पाने की शक्ति की ओर संकेत करता है।

जादू-टोने की इस व्याख्या के आधार पर मलिनॉस्की उन विद्वानों के विचारों को निरर्थक सिद्ध करता है जो जादू-टोने की संकल्पना की मलेनेशियाइयों में माना, उत्तर अमरीकी इंडियनों में वाकन या इराक्वाइयों में ओरेंदे आदि की अवधारणा से तुलना करते हैं।

4.5.2 'माना' और जादू-टोना

मलिनॉस्की ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि जादू-टोना व्यक्तिजन्य उपलब्धि है। दूसरे शब्दों में, यह व्यक्ति विशेष में होता है, जिसका प्रयोग वह विशेष हिदायतों के अनुसार परंपरागत निर्धारित रीति से करता है। आगे उसने बताया कि यह 'माना' की तरह की शक्ति नहीं हैं, जो सर्वत्र परिवेश में तथा लोगों में समाई हो। जादू-टोना किसी भाव में समाई वस्तु नहीं है। इसे तो किसी भी चीज या स्थिति में देखा जा सकता है। स्पष्ट ही, यदि जादू-टोना पूरी तरह से व्यक्ति विशेष तक सीमित है और इसका इस्तेमाल विशिष्ट परंपरागत ढंग से होता है तो इसे 'माना' या इसी तरह के दूसरे सर्वव्यापी शक्ति के द्योतक विचारों के समान नहीं ठहराया जा सकता।

इस विषय में उसका सुझाव है कि आदिवासियों की मनोवृत्ति को समझने के लिए पहले हमें उनके व्यवहार विशेष को समझना होगा और फिर उनके रीति-रिवाजों की मदद से स्थानीय शब्दावली में उसकी व्याख्या करनी होगी। अंत में, उसने कहा कि यह नहीं समझना चाहिए कि जादू-टोने का उद्‌भव माना जैसे सर्वव्यापी शक्ति के अमूर्त विचार से हुआ है। मलिनॉस्की ने इस बात पर बल दिया है कि जादू-टोने के प्रत्येक प्रकार का जन्म उसकी अपनी परिस्थितियों में हुआ है। जादू-टोने का स्रोत लोगों की इन परिस्थितियों के प्रति सहज प्रतिक्रिया और इसके फलस्वरूप प्रकट होने वाले विचार हैं। अब तक जो कुछ हमने कहा वह मलिनॉस्की के जादू-टोने के बारे में आदिवासियों के विचारों का सार है। जादू-टोना मनुष्यों को ऐसी शक्ति देता है, जिसमें वे अपने आसपास के वातावरण पर नियंत्रण स्थापित कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 4

i) जादू-टोने के विभिन्न प्रकारों में सबसे अधिक सामान्य (common) बात क्या है? इसके तीन तत्वों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ii) क्या जादू-टोना जनजातियों में आम तौर पर पाए जाने वाले सभी जगह व्यापक आत्मा या शक्ति में सर्वव्यापी विश्वास के समान है?

.....

.....

.....

.....

.....

4.5.3 जादू-टोना और अनुभव

यहां मलिनॉस्की ने समाजशास्त्रीय पर्यवेक्षक की हैसियत से कुछ चीजों पर नियंत्रण कर सकन का शक्ति पर विश्वास के बारे में चर्चा की है। वह एक बार फिर उस स्थिति का वर्णन करते हैं, जिसमें जादू-टोने के अनुष्ठान किए जाते हैं। जब कोई व्यक्ति रोजमर्रा के क्रियाकलापों में व्यस्त होता है और उसके काम अचानक रुक जाते हैं यानी वह व्यक्ति उस रुकावट को दूर करन में किसी तरह सफल नहीं होता, तब उसे बेबसी या निःसहायता का अनुभव होता है। उसे लगता है कि घटनाक्रम को अपने अनुकूल नहीं बना पा रहा है। उदाहरण के तौर पर अपनी ओर से पूरी कोशिश करने के बावजद कोई शिकारी अपना शिकार मारने में सफल नहीं होता, मछुआरे को मछलियां नहीं मिलती और माली खेती को नष्ट करने वाले कीड़ों पर नियंत्रण नहीं कर पाता, ऐसी स्थिति में कोई क्या करें। अपने आसपास की परिस्थितियों पर नियंत्रण न कर पाने से उसके मन में तनाव पैदा होता है। ऐसी स्थिति में वह कुछ न कुछ करना चाहता है। मलिनॉस्की के अनुसार, ऐसी स्थिति में,

वह उसके बदले में कुछ एवजी काम (substitute activity) करना चाहेगा। जब व्यक्ति तनाव की स्थिति में होता है और उसके अंदर बेबसी के कारण गुस्सा होता है, वह अपने विरोधी अथवा दुश्मन के खिलाफ काल्पनिक हमला करता है और गुस्से में उसे बुरा-भला कहता है। अथवा कोई बिछुड़ा हुआ प्रेमी स्वप्न में या कल्पना में अपने प्रियतम को देखता है। मछुआरे को कल्पना में ऐसा अनुभव होता है कि उसके जाल में खूब सारी मछलियां 'फस गई हैं और वह उनका नाम ले लेकर पुकारता है।

इस तरह के तर्कक्रम के आधार पर मलिनॉस्की ने निष्कर्ष निकाला कि मनुष्यों में जबरदस्त मनोवेगों या आवेशपूर्ण इच्छा की इस प्रकार की प्रतिक्रिया से ऐसी स्थिति बहुत स्वाभाविक है और यह सर्वव्यापी मनोवैज्ञानिक-शारीरिक प्रक्रिया (psycho-physiological mechanism) पर आधारित है। यही प्रतिक्रियाएं जादू-टोने के अनुष्ठान का रूप धारण कर लेती हैं। मैलिनॉस्की के अनुसार, 'ये प्रतिक्रियाएं मनुष्य के सामने उन आवेशपूर्ण अनुभवों के क्षणों में प्रकट होती हैं, जब उसे अपने तर्कपरक कार्यों के दौरान बेबसी (impotency) का अनुभव होता है।'

यहाँ जादू-टोने के अनुष्ठान से समझे जाने वाले लाभ और वास्तव में जीवन में उससे मिलने वाली सफलता के बीच संबंध के बारे में प्रश्न उठता है। मलिनॉस्की इस प्रश्न का उत्तर यह देता हैः इससे होने वाली एक सफलता कई विफलताओं से अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध होती है। इसका मतलब यह है कि जादू-टोने की थोड़ी सी भी सफलता को कहीं अधिक महत्व दिया जाता है और जब वह विफल होता है तो प्रायः उसे नजरअंदाज कर दिया जाता है। जादू-टोना हमेशा समूह के विशिष्ट व्यक्ति द्वारा किया जाता है और इसमें उसकी अपनी कुशलता, योग्यता और मानसिक शक्तियों का भी योगदान रहता है। ऐसी स्थिति में जादू-टोने की प्रभावोत्पादकता जादू-टोना करने वाले की व्यक्तिगत प्रसिद्धि पर निर्भर होती है। इस तरह, जादू-टोने के साथ जुड़ी हई पौराणिकता इसे सजीव शक्ति का रूप प्रदान कर देती है।

जादू-टोने की असफलता का कारण इसके लिए निषिद्ध कार्यों अथवा परहेज पर ध्यान न देना तथा विधि-विधान का पालन न करना माना जाता है। दूसरे, कभी विफलता का कारण अधिक सशक्त जादू-टोने या विरोधी जादू-टोने को बताया जाता है। अपने आसपास के वातावरण या परिवेश पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित करने की इच्छा तथा तर्कपरक क्रियाकलाप और उसकी अनुवर्ती बेबसी और उसके बदले में किए जाने वाले कार्य के परिणामस्वरूप जादू-टोने की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत, अपने पड़ोसी से अधिक सम्पत्ति और शक्ति पाने की इच्छा से विरोधी जादू-टोने की आवश्यकता होती है। मलिनॉस्की ने अपने ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासियों के संदर्भ में एकत्र सामग्री में से उदाहरण देते हए बताया कि प्रत्येक जादू-टोने का विरोधी जादू-टोना होता है। ऐसा माना जाता है कि जादू-टोने के अनुष्ठान के प्रभाव को विरोधी जादू-टोने से समाप्त किया जा सकता है। एक जादू-टोना करने वाला जहां जादू-टोने से किसी को बीमार करना सीखता है वहीं वह उस बामारी को ठीक करने का तरीका भी सीखता है। इस प्रकार जादू-टोने की सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों प्रकार की शक्तियां उसके आवश्यक अभिलक्षण हैं और इसी से इस बात की भी व्याख्या हो जाती है कि क्यों कभी-कभी जादू-टोने के अनुष्ठानों से मनचाहा परिणाम नहीं मिलता।

अगले भाग में जादू, विज्ञान तथा धर्म के बीच समानताओं एवं असमानताओं पर चर्चा होगी।

सोचिए और करिए 3

क्या आप मलिनॉस्की के इस दावे से सहमत हैं कि जादू-टोना एक तरह से बदले में की गई क्रिया (substitute activity) है? दो पृष्ठ की टिप्पणी लिखिए कि क्यों कोई व्यक्ति तर्कपरक कार्य के असफल होने पर उसके बदले कोई दूसरा कदम उठाता है।

4.6 समानताएं और असमानताएं

अपने निबंध के अंत में मलिनॉस्की ने जादू-टोने और विज्ञान तथा जादू-टोने और धर्म के बीच संबंधों को संक्षेप में प्रस्तुत किया है। इन संबंधों को समानताओं एवं असमानताओं के आधार पर समझा जा सकता है।

4.6.1 जादू-टोना और विज्ञान

मलिनॉस्की ने इन दोनों तत्वों के बीच संबंध को समानता और असमानता के आधार पर प्रस्तुत किया है। आइए, पहले हम समानताओं के बारे में विचार करें।

समानताएं

i) विज्ञान की तरह जादू-टोने का भी मानव की आवष्कताओं और सहज वृत्तियों से संबंधित विशिष्ट उद्देश्य होता है। दोनों ही कुछ नियमों की व्यवस्था द्वारा नियंत्रित होते हैं, जिनसे यह निर्धारित होता है कि कैसे किसी कार्य को प्रभावशाली ढंग से सम्पन्न किया जा सकता है।

ii) विज्ञान और जादू-टोने में किन्हीं कार्यो को पूरा करने के लिए कुछ तकनीकों (प्रविधियों) का विकास किया जाता है। इन समानताओं के आधार पर मलिनॉस्की इस नतीजे पर पहुंचा कि वह जेम्स फ्रेजर की इस बात से सहमत है कि जादू-टोना एक तरह का अधकचरा विज्ञान (pseudo-science) है।

असमानताएं

i) जनजातियों के आदिम ज्ञान में जिस रूप में विज्ञान दिखाई देता है, वह रोजमर्रा के सामान्य अनुभव से संबंधित है। यह उनकी प्रकृति के साथ अंतःक्रिया के पर्यवेक्षण और तर्क पर आधारित है। दूसरी ओर, जादू-टोना तनावपूर्ण आवेशात्मक स्थितियों के विशिष्ट अनुभवों पर आधारित है। इन स्थितियों में प्रकृति के पर्यवेक्षण के बजाय व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व या उसकी बेबसी महत्वपूर्ण है (देखिए उपभाग 4.5.3)।

ii) विज्ञान का आधार अनुभव, प्रयास और तर्क की वैधता में विश्वास है। परन्तु जादू-टोना इस विश्वास पर आधारित है कि व्यक्ति के मन में आशावादिता बनी रहे तथा वह येन-केन प्रकारेण इच्छा-पूर्ति कर सके।

iii) हर समाज विशेष में तर्कपरक ज्ञान की सामग्री को संकलित किया जाता है। दूसरी ओर कुछ ऐसी विशेष प्रकार की गतिविधियां होती हैं, जो स्पष्ट रूप से समाज के लौकिक काम-काजों से भिन्न हैं और जिन्हें उनसे अलग करके देखा जा सकता है। ये जादू-टोने से संबंधित होती हैं। इन असमानताओं के आधार पर मलिनॉस्की इस परिणाम पर पंहुचा कि विज्ञान का संबंध लौकिक क्षेत्र से है, जबकि जादू-टोने का संबंध पवित्र क्षेत्र के आधे हिस्से से है, क्योंकि पवित्र क्षेत्र का आधा हिस्सा धर्म का है।

4.6.2 जादू-टोना और धर्म

जिस प्रकार मलिनॉस्की ने जादू-टोने की विज्ञान से तुलना की, उसी प्रकार उसने जादू-टोने और धर्म के बीच भी संबंध प्रदर्शित किया। उसके अनुसार, दोनों में निम्नलिखित समानताएं हैं।

समानताएं

i) जादू-टोना और धर्म दोनों पवित्रता के क्षेत्र में आते हैं और इन दोनों का उदय आवेशात्मक तनाव के बीच होता है और ये दोनों ही आवेशात्मक तनाव में कार्यान्वित होते हैं।

ii) इन दोनों तत्वों की सहायता से मनुष्य को आवेशात्मक तनाव से मुक्ति मिलती है। आदिम लोगों के तर्कपरक ज्ञान के आधार पर इस तरह के तनाव का निराकरण नहीं हो सकता।

iii) जादू-टोना और धर्म दोनों ही पौराणिक परंपराओं से बहुत निकट से जुड़े हैं। इन दोनों क्षेत्रों से संबंधित निषेध और आचरण या विधि-विधान इन्हें लौकिक क्षेत्र से अलग करते हैं।

असमानताएं

यदि हम धर्म और जादू-टोने के बीच असमानताओं को देखें तो हमें असमानताओं के निम्नलिखित क्षेत्र दिखाई देते हैं।

i) जादू-टोने के अनुष्ठान किसी लक्ष्य को पाने के साधन हैं। जबकि धार्मिक कार्य स्वतः पूर्ण कार्य हैं, जिन्हें आत्म-तुष्टि के लिए किया जाता है।

ii) जादू-टोने की कला की बड़ी स्पष्ट और सीमित तकनीक वाली प्रविधि है। मंत्र-तंत्र, अनुष्ठान और जादू-टोना करने वाला (ओझा) इसके मुख्य तत्व हैं। धर्म की कोई ऐसी सरल तकनीक नहीं है। इसके अनेक पहलू और प्रयोजन हैं। इसका तार्किक आधार इसके विश्वास और आचरण के प्रकार्य में निहित है।

iii) जादू-टोने में विश्वास का संबंध किसी व्यक्ति द्वारा जादू-टोने या मंत्र-तंत्र की सहायता से मनचाहा कार्य सिद्ध करने की शक्ति में विश्वास से है। दूसरी ओर, धर्म का संबंध संपूर्ण अलौकिक शक्तियों में आस्था से है।

iv) धर्म में पौराणिक परंपरा जटिल और सृजनात्मक दोनों होती है और इसका केन्द्र आस्था का सिद्धांत है। जादू-टोने में अपने मूल के बारे में पौराणिक परंपरा में गर्वोक्तिपूर्ण विवरण होते हैं।

v) जादू-टोने की कला पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक ओझा से दूसरे ओझा को प्राप्त होती है। यह प्रायः सीधे बाप से बेटे को प्राप्त होती है। इस प्रकार यह विशेषज्ञों के बीच सीमित रहती है। दूसरी ओर, धर्म में प्रत्येक व्यक्ति सक्रिय रूप से भाग लेता है। उदाहरण के तौर पर, समुदाय के प्रत्येक सदस्य को दीक्षा लेनी पड़ती है। इसी तरह, उचित समय पर प्रत्येक को शोक या मातम की प्रक्रिया में से गुजरना पड़ता है। शोक प्रकट करने के लिए भी एक शोक किया जाता है। और फिर सभी के लिए प्रेत-आत्माओं का महत्व है और मरने के बाद सभी को प्रेतात्मा बनना पड़ता है। धर्म के क्षेत्र में आध्यात्मिक माध्यम बनना एक विशेषीकृत भूमिका भले ही हो, परन्तु यह कोई व्यावसायिक भूमिका नहीं है जिसे कोई भी सीख सकता हो। यह तो केवल वैयक्तिक प्रतिभा होती है। इसे जादूगीरी के समकक्ष नहीं समझना चाहिए।

vi) जादू-टोना सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार का होता है क्योंकि जादू-टोने का प्रत्यक्ष परिणाम के रूप में व्यावहारिक प्रभाव पड़ता है। इसलिए सकारात्मक और नकारात्मक जादू-टोने के बीच वैशम्य की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मलिनॉस्की के अनुसार धर्म में, कम से कम आरंभिक अवस्था में, लाभकारी और द्वेष पूर्ण शक्तियों के बीच कोई विशेष अंतर नहीं होता।

बोध प्रश्न 5

i) जादू-टोना, विज्ञान और धर्म इन तीनों सामाजिक तत्वों में से कौन से दो तत्व उन नियमों की पद्धति से बने हैं, जो यह निर्धारित करते है कि किस प्रकार कोई भी कार्य भी कार्य प्रभावपूर्ण ढंग से किया जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

ii) जादू-टोना, विज्ञान और धर्म में से कौन-से दो सामाजिक तत्व पवित्र क्षेत्र से सम्बद्ध हैं और आवेशात्मक तनाव में पैदा और कार्यान्वित होते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

iii) पहचान कीजिए कि जादू-टोना, विज्ञान और धर्म--तीनों में से कौन-सा तत्व निम्नलिखित कथन पर लागू होता है।

क) यह इस विश्वास पर आधारित है कि व्यक्ति के मन में अभी आशावादिता बनी रहे और इच्छा-पूर्ति होती रहे।

ख) यह अनुभव, प्रयास और तर्क की वैधता के दृढ़ विश्वास पर आधारित है।

ग) यह तनाव और आवेशात्मक स्थिति का विशिष्ट अनुभव है।

घ) यह जीवन के सामान्य अनुभव से संबंधित है।

ड.) इसके बहुत से पहलू और प्रयोजन है। इसका तार्किक आधार इसके विश्वास और आचरण के प्रकार्य में निहित है।

4.7 जादू-टोना, विज्ञान और धर्म का प्रकार्य

अंत में, मलिनॉस्की ने अपने प्रिय विषय के रूप में इनमें से प्रत्येक तत्व के सांस्कृतिक प्रकार्य को प्रदर्शित करने का प्रयास किया है। ज्ञान का प्रकार्य जनजाति के लोगों को अपने आसपास के वातावरण से परिचित करने और उन्हें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने लायक बनाना है। इसके द्वारा वह उन्हें विश्व के अन्य प्राणियों से अलग और श्रेष्ठ बना देता है।

धर्म का प्रकार्य एक विशिष्ट मानसिकता का निर्माण करना है यथा परंपरा का आदर करना, प्रकृति के साथ समन्वय स्थापित करना, जीवन के लिए संघर्ष करना, यहां तक कि अगर मृत्यु भी आ जाए तो साहस और विश्वास रखना।

जादू-टोने का प्रकार्य जनजातीय लोगों को रोजमर्रा के जीवन में जीने के लिए और कठिनाइयों का मुकाबला करने के लिए व्यावहारिक तरीका उपलब्ध कराना है। इसके द्वारा उनमें जीवन में आने वाली अपरिहार्य समस्याओं के साथ जीने की योग्यता का विकास होता है। इस प्रकार मलिनॉस्की (1948:9) का मत है कि जादू-टोने का काम अनुष्ठान के द्वारा मनुष्य में आशा का संचार करना और भय के ऊपर आस्था की विजय के विश्वास को बढ़ाना है।

सोचिए और करिए 4

अपनी पंसद के समूह के धार्मिक व्यवहार में दो उदाहरण चुनिए। मलिनॉस्की की दृष्टि में उनके प्रकार्य दिखाइए।

4.8 सारांश

हमने इस इकाई की शुरुआत मलिनॉस्की के समय में जादू-टोने, विज्ञान और धर्म में विवाद के संबंध में चर्चा के द्वारा की। इसके बाद जादू-टोना, विज्ञान और धर्म के सामाजिक तथ्यों के अध्ययन में मलिनॉस्की के दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया गया। इस विषय पर उसके निबंध को सार रूप में प्रस्तुत करते हुए हमने लौकिक क्षेत्र और पवित्र क्षेत्र का विवरण दिया। इसमें प्रथम के अंतर्गत आदिम ज्ञान के संबंध में उसके विचारों के बारे में चर्चा की, जो मलिनॉस्की के अनुसार अपने आसपास के वातवरण के प्रति वैज्ञानिक मनोवृति और तर्कपरक दृष्टिकोण का उदाहरण है। दूसरे के अंतर्गत जादू-टोने और धार्मिक विश्वासों के बारे में विचार किया गया है। अंत में, हमने जादू-टोने और विज्ञान के बीच तथा विज्ञान और धर्म के बीच समानताओं और असमानताओं के बारे में मलिनॉस्की के विचारों को प्रस्तुत किया। इसके बाद, जादू-टोने, विज्ञान और धर्म के प्रकार्यों का संक्षिप्त विवरण दिया। यहां प्रयास यह रहा है कि मलिनॉस्की की विचार-पद्धति का एक ठोस दृष्टांत आपके सामने प्रस्तुत किया जाए, जिससे आपका उसके विचारों की अपेक्षाकृत नवीनता से परिचय हो जाए।

4.9 संदर्भ

मलिनॉस्की बी., 1974. मैजिक, *साइंस एंड रिलीजन एंड अदर ऐस्सेज,* लंदनः सॉवनिर प्रेस

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री (2005) *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO 13), नई दिल्ली : इग्नू

4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) धर्म के संबंध में टाइलर के विचार के संदर्भ में ''जीववाद का अर्थ है शरीर से अलग आत्मा के अस्तित्व में विश्वास।

ii) फ्रेजर के मत में आदिम लोगों ने अपने रोजमर्रा के जीवन-यापन के लिए प्रकृति पर नियंत्रण स्थापित करने की कोशिश की। इस काम के लिए उन्होंने जादू-टोने का सहारा लिया। जब उनका जादू-टोना अपने मनचाहे लक्ष्य को पाने में असफल हुआ तो वे उच्चतर आध्यात्मिक तत्व से याचना करने लगे और इससे धर्म का उद्भव हुआ।

बोध प्रश्न 2

i) इसमें बताया गया है कि ट्रॉब्रिएंड द्वीपवासी अपने दैनिक कामकाज के लौकिक क्रियाकलापों को जादू-टोने के अनुष्ठानों के साथ नहीं मिलाते हैं। इनमें पहला क्षेत्र अपने आसपास के वातावरण के प्रति तर्कपरक दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि दूसरा क्षेत्र प्रकृति की रहस्यमय और अज्ञात घटनाओं के प्रति उनकी बेबसी को दर्शाता है।

ii) अपने आसपास के वातावरण के प्रति तर्कपरक दृष्टिकोण का मतलब यह नहीं है कि उनका जादू-टोने में विश्वास नहीं है। जादू-टोने का प्रकार्य जीवन की अज्ञात परिस्थितियों के लिए है, जबकि तर्कपरक चिंतन और लौकिक कार्य लोगों को अपने वातावरण को वास्तव में नियंत्रित करने में सहायक होते हैं।

बोध प्रश्न 3

i) दीक्षा अनुष्ठान का मुख्य उद्देश्य आदिम लोगों को उनके समूह की पवित्र परपरा के रहस्यों में दीक्षित करना है।

ii) आत्मा के अमरत्व की धारणा लोगों को मृत्यु के द्वारा होने वाले भय और दुख की भावना को जीतने में सहायक होती है।

बोध प्रश्न 4

i) जादू-टोने के अनुष्ठान (तंत्र-मंत्र) का बल सभी प्रकार के जादू-टोने का एक सामान्य अभिलक्षण है। जादू-टोने के तीन तत्व है।

   क) अनुष्ठान संबंधी उच्चरित अंशों का धन्यात्मक प्रभाव,

   ख) जादू-टोने के अनुष्ठान में शब्दों का चुनाव, और

   ग) संस्कृति, वीर पुरुषों, नायकों या पुरखों अथवा दूसरी अलौकिक शक्तियों का नामोल्लेख।

ii) सर्वव्यापक आत्मा या शक्ति में विश्वास को जादू-टोने के समान नहीं माना जा सकता, क्योंकि जादू-टोने का संबंध सामाजिक जीवन के केवल एक पक्ष से है, जबकि सर्वव्यापक शक्ति का संबंध सभी पक्षों से होता है।

बोध प्रश्न 5

i) जादू-टोना और विज्ञान

ii) जादू-टोना और धर्म

iii) क) जादू-टोना

   ख) विज्ञान

   ग) जादू-टोना

   घ) विज्ञान

   ड.) धर्म

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY